तीन विधायें

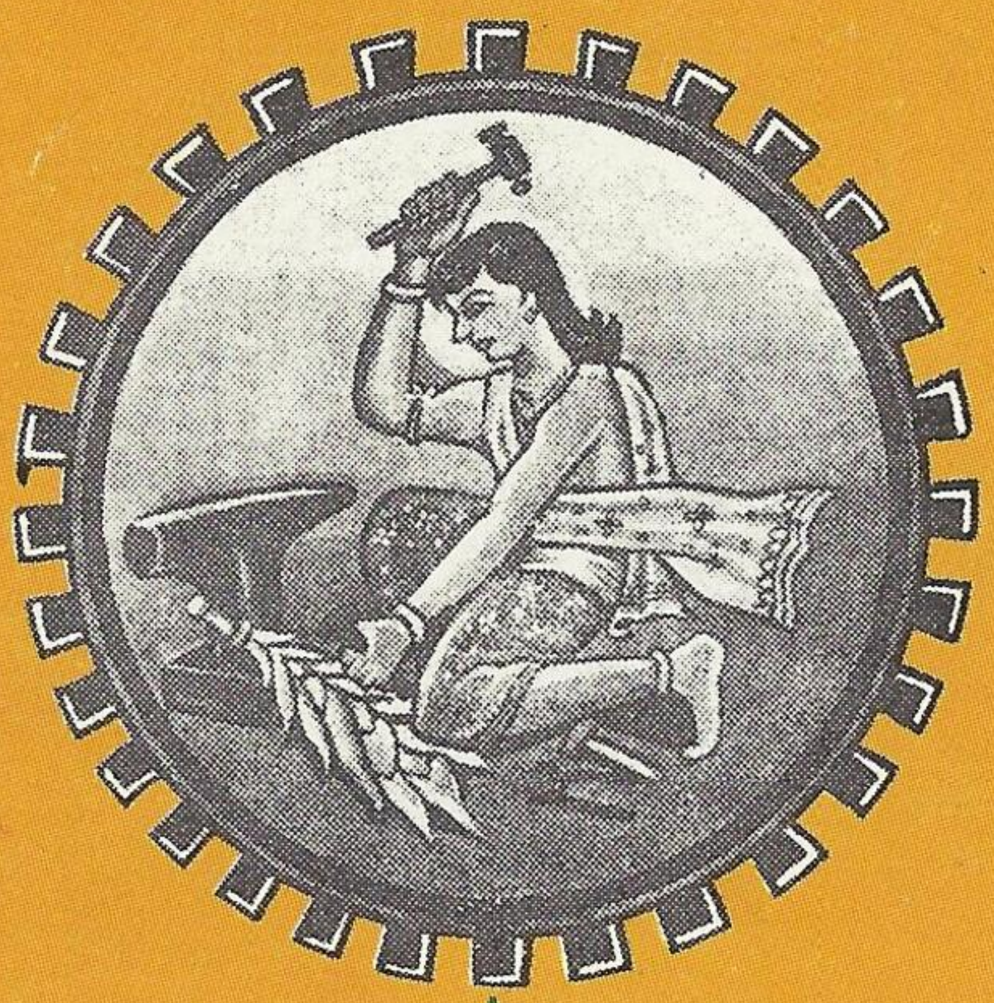

भगवान विश्वकर्मा

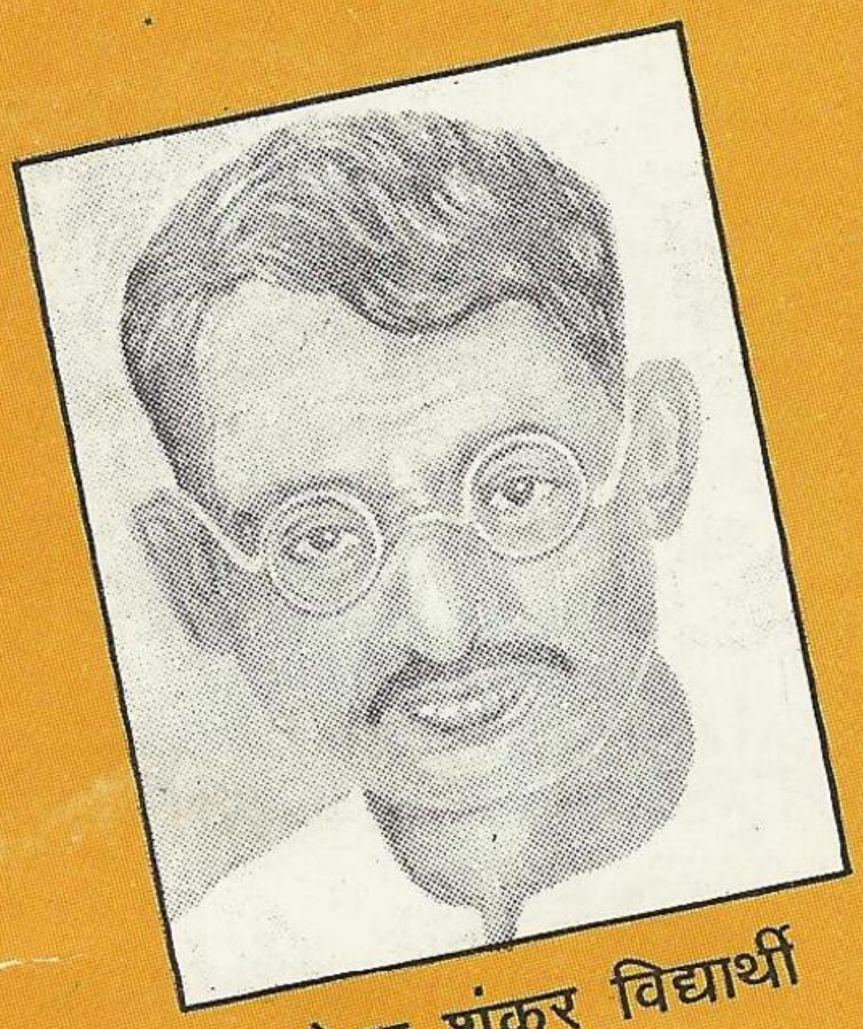

गणेश शंकर विद्यार्थी

बाबू गेनू

अर्चना प्रकाशन

तीन विधायें

वसंत दीक्षित
प्रा. डॉ. राम बिवलकर
दत्तोपंत ठेंगड़ी

प्रकाशक
अर्चना प्रकाशन भोपाल

प्रकाशक : **अर्चना प्रकाशन**
जी.१७ दीनदयाल परिसर,
ई–२ महावीर नगर, भोपाल –४६२०१६
फोन नं. ५६६८६५

संस्करण : प्रथम संस्करण
कबीर जयंती ज्येष्ठ, शुक्ल १५,
विक्रम संवत २०५५ युगाब्द ५१००
(१० जून, १९९८)

मूल्य : दस रुपया

अक्षर सयोजक : विश्व संवाद केन्द्र (मध्य भारत)
फोन –५५२६८५

मुद्रक : बैल प्रिंटर्स, भोपाल

प्रस्तावना

अपनी संस्कृति के अनेक गौरवमयी आयाम जो कि देश के १२०० वर्ष की गुलामीपूर्ण जीवन में विलुप्त हो गये थे अथवा षड्यंत्रपूर्वक भुलाने का प्रयास किया गया था को पुनर्स्थापित करने के लिये हमारा देश सतत प्रयासरत है।

विश्व के आद्य शिल्पी या प्रथम श्रमिक कहलाने वाले विश्वकर्मा जिन्होंने अपने त्याग, तपस्या एवं बलिदान द्वारा विश्व एवं समाज हित में अनेक निर्माण कार्य कर भगवान विश्वकर्मा बन गये का प्रेरक जीवन श्रमिकों में सृजन का भाव जगाकर समाज हित में निर्माण कार्य करने की प्रेरणा देता है। कारण है कि उन्होंने अपने श्रम को समाज हित में अर्पित कर दिया। भगवान विश्वकर्मा द्वारा घोर तपस्या कर वरदान से प्राप्त अपने एकमात्र पुत्र वृत्रासुर जिसके दुष्कर्मों के कारण जब समाज भारी पीड़ित हो गया तब समाज के आग्रह पर उसके वध करने के लिए महर्षि दधिचि की हड्डियों का वज्रास्त्र बनाकर समाज को अर्पित किया जिसके द्वारा उसका वध हुआ और समाज में अमन और शान्ति स्थापित हुई। समाज के प्रति इतने उच्च त्याग के उदाहरण विरले ही मिलते हैं। ऐसे त्यागी एवं कर्मशील महामानव का जन्मदिन ही वास्तव मे श्रमिक दिवस हो सकता है। अतः भारतीय मजदूर संघ द्वारा 'विश्वकर्मा जयंती' १७ सितंबर के दिन को राष्ट्रीय श्रम दिवस के रूप में मनाया जाता है।

स्वभूषा, स्वधर्म, स्वसंस्कृति तथा स्वदेश के प्रति गौरवपूर्ण भाव जागृत करने के लिए स्वदेशी जागरण मंच के तत्वावधान में समाज में अनेकों कार्यक्रम किये जा रहे हैं। स्वदेशी के लिए बलिदान करने वाले मुम्बई के एक अत्यंत गरीब गोदी श्रमिक बाबू गेनू के बलिदान दिवस १२ दिसम्बर को स्वदेशी जागरण मंच के महत्वपूर्ण दिवसों में से एक के रूप में मनाया जाता है।

स्वतंत्रता संग्राम में स्वदेशी का आन्दोलन प्रारंभ हुआ उसमें बाबू गेनू ने अत्यंत गरीबी की हालत में भी रहते हुए सक्रिय भाग लिया। मुम्बई की गोदी से विदेशी वस्त्रों से लदे ट्रक जब रवाना होने लगे तब अपना विरोध प्रगट करते हुए एक ट्रक के सामने लेट गये एक अंग्रेज सारजेण्ट ने अपनी क्रूरता की पराकाष्ठा दिखाते हुए ट्रक उनके ऊपर चढ़ कार कुचल दिया जीवन के अन्तिम क्षण तक विदेशी चीजों का विरोध करते हुए अपने जीवन का बलिदान देने वाले बाबू गेनू ने देश एवं समाज

के समक्ष अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है।

सर्वपंथ समादर का भाव हिन्दुओं में प्राचीन काल से ही रहने के कारण भारत में अनेक पंथ होते हुए भी सभी परिवारभाव से भाई भाई की तरह जीवन यापन करते रहे हैं।

अपने देश की महान संस्कृति में पले, बढ़े श्री गणेश शंकर विद्यार्थी ने भी अपने जीवन का बलिदान देकर इस महान संस्कृति में मिलने वाले उदाहरणों मे सर्वपंथ समभाव की एक कड़ी और जोड़ दी। २५ मार्च १६३१ को कानपुर में जब साम्प्रदायिक दंगे भड़के उस समय श्री विद्यार्थी ने हिन्दु बहुल क्षेत्र से मुसलमानों की प्राणरक्षा हेतु मुस्लिम बहुल क्षेत्र में पहुंचाया । इसी प्रकार मुस्लिम बहुल क्षेत्र से हिन्दुओं को भी बाहर लाकर हिन्दु बहुल क्षेत्र में पहुंचाने का कार्य दिन भर किया। इसी कार्य में उनका बलिदान हो गया। अपने जीवन का बलिदान कर सर्वपंथ समादर भाव का उत्कृष्ट कार्य करने वाले श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के बलिदान दिवस को सर्वपंथ समादर मंच केविशिष्ट कार्यक्रम में एक उच्चस्थान देकर शहीद दिवस के रूप में प्रतिवर्ष मनाया जाता है।

उपर्युक्त तीनों विधाओं को उत्कृष्ठ रूप देने वाले तीनों प्ररेणा पुंज को समाज में प्रस्थापित करने के लिए ही यह पुस्तिका **'तीन विधायें'** पाठकों को समर्पित हैं। इन्हीं तीन घटनाओं का इस पुस्तक में संक्षिप्त रूप मे उल्लेख किया है। कार्यकर्ताओं को इन विषयों पर विचार करते समय यह पुस्तक सहायक बन सकती है।

पुस्तिका की उपयोगिता कितनी है इसका निर्णय तो पाठकगण ही कर सकेंगे। पुस्तिका प्रकाशन में अर्चना प्रकाशन के मुख्यकार्यकारी श्री ओमप्रकाश गुप्ता के अथक प्रयास सराहनीय हैं।

धन्यवाद।

(मांगीलाल पोरवाल)

महामंत्री

भारतीय मजदूर संघ, मध्यप्रदेश

भगवान विश्वकर्मा

अति प्राचीन काल से भारतीय विचारधारा में मनुष्य के सर्वांगीण विकास का विचार होते आ रहा है। मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि, तथा आत्मा का अनुबंध है। शरीर ही उर्वरित तीन तत्वों को धारण करता है। अतः मनुष्य के सर्वांगीण विकास की प्रकिया में शरीर से संबद्ध सभी आवश्यकताओं का व्यापकता से विचार हुआ है। यह कहना सर्वथा असत्य होगा कि, भारतीय दर्शनों में ऐहिक प्रगति की ओर सर्वथा अनास्था प्रगट होती है और वर्तमान भौतिक प्रगति की चमक धमक केवल पश्चिमी देशों की ही देन है। इस कथन में तथ्य केवल इतना ही है कि भारतीय मनिषियों ने ऐहिक प्रगति को ही एकमेव लक्ष्य मानकर केवल सुख–चैन के साधनों का भंडार खड़ा करने में ही अपना बौद्धिक सामर्थ्य उपयोग में नहीं लाया अपितु ऐहिक प्रगती के साथ आध्यात्मिक विकास को भी सामाजिक उन्नयन का आवश्यक अंग माना। अभ्युदय (ऐहिक) एवं निःश्रेयस (पारमार्थिक) साधना को पुरुषार्थ मानकर नित्य के व्यवहार में अपनाया गया। इस कठिन साधना का नाम है "वीरव्रत"। जिन्होंने अपने जीवन में इस वीरव्रत को चरितार्थ किया ऐसे अनेक महापुरुषों की गौरवशाली परंपरा इस देश में निर्माण हुई। अनेक महापुरुषों ने, ऋषि–मुनियों ने अपने मौलिक चिंतन के द्वारा अपनी तपस्या से और अविराम अनुसंधन कार्य से सभी प्रकार के शस्त्र, शास्त्र, कला और विद्याओं के अविष्कार से इस देश को संपन्न बनाया। विपुल मात्रा में धन–धान्य आदि से युक्त भौतिक ऐश्वर्य का अनुभव इस देश में किया तथापि सुख–संपदा के मध्य में होते हुए भी भारतीय समाज सुखसीनता की भावना से मुक्त रहा। सुख–साधनों का संयत उपभोग और त्यागवृत्ति यह भारतीय जीवन की मौलिक विशेषता रही। जिन वीरव्रती महापुरुषों को इन जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठापना का श्रेय है, उनके अग्रणी है भगवान श्री विश्वकर्मा।

श्री विश्वकर्मा वैदिक देवताओं में से एक है। ऋग्वेद में (१०–१२१) उन्हें पृथ्वी, जल, प्राणि आदि के निर्माता कहा है। अथर्ववेद, वाजसनेय संहिता, ब्राह्मणों एवं पुराणों में उनका गौरवपूर्ण उल्लेख है। वाजसनेय संहिता (१२–६१) में उन्हें सर्वद्रष्टा प्रजापति कहा है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार वे विधाता प्रजापति है। महाभारत एवं पुराणों ने विश्वकर्मा को देवताओं का महान शिल्पशास्त्री तथा स्वायंभुव मन्वंतरके शिल्प प्रजापति कहकर गौरवान्वित किया है। अनेक सह स्त्र वर्षो में बटे

प्रदीर्घ कालखण्ड में उनके कार्य का विस्तार पाया जाता है। अतः मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि एक ही व्यक्ति सहस्त्रों वर्षो तक जीवित रहकर कार्य कैसे कर सकता है? इसलिए यह समझ लेना आवश्यक होगा कि विश्वकर्मा यह केवल एक व्यक्ति का बोध वाचक शब्द नहीं किन्तु, एक रचनात्मक, स्वस्थ और समाज हितैषी परंपरा का नाम है। यह परंपरा अष्टावसु में से आठवे वसु प्रभास एवं देव–गुरु बृहस्पती की भगिनी वरस्त्री इनके विश्वकर्मा नामक श्रेष्ठ पुत्र में प्रारंभ हुई। उनके पश्चात जिन महापुरुषों ने पूर्ण समरसता से अपना योगदान देते हुए उसी दिशा में कार्य को आगे बढ़ाया वे सभी समाज के लिए आदरपात्र हुए और उन्हें विश्वकर्मा का ही प्रतीक मानकर उन्हीं के नाम से संबोधित किया जाने लगा।

विश्वकर्मा की माता वरस्त्री ने उच्च कोटि की योगसाधना की थी और सारे विश्व का भ्रमण किया था। वह इस कारण योगसिद्धा नाम से प्रख्यात थी। विश्वकर्मा ने अपने माता–पिता के कुशाग्र बुद्धिमत्ता मूलग्रही प्रज्ञा एवं त्यागमय जीवन के संस्कार पाये थे। वे कर्मशील और तपःपूत थे। मातुल बृहस्पती के समान वे सर्वज्ञाता थे। समाज धारणा के लिए उन्होंने अनेक स्वस्थ व्यवस्थाएं निर्माण की। संयोगवश रचना नामक स्त्रीसे ही उनका विवाह हुआ था। यह भगवान विष्णु के परम भक्त प्रहलाद की पुत्री थी। रचना विश्वकर्मा के जीवन की आस्था थी।

विश्वकर्मा शब्द बड़े व्यापक अर्थ में प्रयुक्त है। यजुर्वेद के अनुसार "विश्वम् (सर्वम) कर्म (कियमाणम्) यस्य सः" अथवा "विश्वम् (कृत्सनम्) कर्म व्यापारी वा यस्य सः विश्वकर्मा" अर्थात सभी कर्म, किया कपाल जिनके द्वारा प्रयुक्त हुए इस अर्थ में सृष्टि के रचयिता परमेश्वर के रूप में विश्वकर्मा का बोध होता है। ब्रह्मा के इच्छा से उन्होंने समय समय पर नवनवीन उपकरणों की खोज की । इतना ही नहीं, सौर ऊर्जा की उपयोगिता उन्होंने समझ ली थी। और इस उर्जा का उपयोग करने की प्रकिया एवं उसका नियंत्रण करने का ज्ञान उन्हें अवगत था। "सौर देवता की उपाधि" इन शब्दों में उनका वर्णन पुराणों में पाया जाता है। समय आने पर सौर शक्ति का उपयोग करते हुए उन्होंने विष्णु के लिए सुदर्शन चक्र, शिव के लिए त्रिशूल और इंद्र के लिए विजय नामक रथ बनाया। आधुनिक परिभाषा में जिन्हें हम क्षेपणास्त्र या अवकाशयान (SPCE CRAFT) कहते हैं, उन्हीं में इन सौर शक्तियुक्त साधनों की गणना हो सकती है।

विश्वकर्मा एक महान उच्च कोटि के शिल्पशास्त्रज्ञ थे। उन्हें स्वायंभुव मन्वन्तर के शिल्प प्रजापति संज्ञा तो प्राप्त थी ही, वास्तुस्थापत्य शास्त्र का ज्ञान भी उन्हें अवगत था। "विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र" इस ग्रंथ के वे कर्ता माने जाते है।

वास्तुकला को एक शास्त्र के रूप में प्रस्तुत करने वाला यह जगत का सर्वप्रथम ग्रंथ है। विश्वकर्मा ने इंद्र के लिए इंद्रलोक और सुतल नामक पाताल, भगवान कृष्ण के लिए द्वारिका और वृंदावन, हस्तिनापुर, इंद्रप्रस्थ वैसे ही राक्षसों के लिए लंका निर्माण की। पौराणिक साहित्य में इन नगरों का प्रचुर वर्णन मिलता है। इन नगरों की विशेषता थी कि वे रचना की दृष्टि से सुंदर, सुरक्षा की दृष्टि से अभेद्य और अंतर्गत सुविधाओं से परिपूर्ण थे। पांडवों के लिए जिसने वैचित्र्यपूर्ण मयसभा बनायी थी वह मयासुर विश्वकर्मा का ही शिष्य था।

भगवान विश्वकर्मा की प्रतिभा बहुमुखी थी। उनका नवनिर्माण कार्य और संशोधन केवल वास्तुकला या शिल्पशास्त्र के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था। अन्य अनेक शास्त्रों के सृजन और विकास में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। शस्त्रास्त्र, आभूषण, विमान आदि के वे जनक माने जाते है। प्रसिद्ध पुष्पक विमान उन्हींने बनाया था। इस विमान की विशेषता यह थी कि वह भूतल पर, जल में और आकाशमार्ग से भ्रमण कर सकता था। क्वचित् भूमौ, क्वचित् व्योम्नि, गिरी, श्रृंगे जले क्वचित्" ऐसा वर्णन मिलता है इस विमान का। दुनिया के ज्ञात इतिहास में भगवान विश्वकर्मा ही एकमात्र हैं जिन्होंने राष्ट्रजीवन से जुड़े विविध पहलुओं का सम्यक् अभ्यास करतें हुए अपनी असामान्य प्रतिभा से अनेक उपयुक्त साधनों कां और यंत्रों का विकास किया। वे ललित कलाओं के भी मर्मज्ञ ज्ञाता थे। संगीत कला, नृत्य, चित्रकला, वास्तुशिल्पकला आदि कलाओं से युक्त सांस्कृतिक वैभव के एक मात्र स्रोत श्री विश्वकर्मा है। भारतीय समाज के लिए यह निःसंदेह गौरव की बात है कि विश्वकर्मा हमारे पूर्वजों में से एक थे। भारतीय समाज के टूटते हुए सांस्कृतिक धरोहर को बचाने के लिए और पुनः विकास की प्रेरणा पाने के लिए विश्वकर्मा का स्मरण अनिवार्य होता है।

यदि हम अपने गौरवशाली अतीत में झाककर देखें तो यह दिखाई देगा कि भारत में स्वनियोजित कारागिरी की एक ऐसी स्वयंपूर्ण स्वस्थ व्यवस्था विद्यमान थी जिसके कारण हर श्रमिक आत्मनिर्भर और ससम्मान समाज में प्रतिष्ठित था।

प्राचीन काल में भारत दुनिया का सर्वाधिक वैभव संपन्न देश था। भारत का आर्थिक और औद्योगिक विकास कुटिरोद्योग के माध्यम से हुआ था। हर परिवार में अपना अपना स्वनियोजित उद्योग हुआ करता था। इस प्रकार के पारिवारिक उद्योगों में न अन्य किसी का हस्तक्षेप था, न किसी पर निर्भरता थी। वंशपरंपरा से अभ्यस्त होने के कारण कारागिरों में अप्रतिम कुशलता थी। स्वयं रोजगार की

जनमानस में प्रतिष्ठा थी। स्वनियोजित कारागिरी की यह परंपरा विश्वकर्मा से प्रारंभ हुई। इस व्यवस्था में श्रमिक–मलिक द्वंद्व को स्थान नहीं था। श्रमिक स्वयं अपना मालिक या और मालिक स्वयं श्रमिक था। दोनों भूमिकाओं में व्यक्तिशः वह समाज का एक अंग इस नाते कृतार्थ और पवित्र बुद्धि से, पूरी लगन से और सामाजिक कर्तव्य की भावना से अपना काम करता था। श्रम की प्रतिष्ठा का संवर्धन करने वाली इससे बढ़कर अन्य कोई व्यवस्था हो सकती है? जनता ने इस व्यवस्था का असाधारण महत्व समझ कर उसे सामाजिक परंपरा के रूप में आत्मसात किया और इस परंपरा के जनक आद्यतन श्रमिक विश्वकर्मा को भगवान मानकर पूजा। कच्छ से कामरूप तक और काश्मीर से कन्याकुमारी तक विस्तीर्ण भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में व्याप्त खेतिहर, सुनार, लोहार, बढ़ई आदि सारे श्रमिक स्वयं को विश्वकर्मा के वंशज मानते हैं और गौरव का अनुभव करते है। यह समाज प्राचीन काल से देश के औद्योगिक तथा आर्थिक विकास का मूल आधार बन कर रहा है। अपने अपने हुन्नर में अप्रतिम कौशल्य आत्मसात कर सुंदर कशिदागारी, सुवर्णालंकार, नक्षीकाम और अत्युत्तम शिल्प की निर्मिती करके इस समाज ने विश्व में देश का सम्मान बढ़ाया है। विश्वकर्मा इस समाज में इस तरह व्याप्त हैं मानो सारा समाज उनकी ही संतान है।

व्यक्ति के मानसिक उन्नयन की प्रक्रिया को परिचालित कर नर से नारायणत्व प्राप्त करना यही भारतीय संस्कृति का लक्ष्य है। सद्‌गुण, सद्‌विचार और सदाचरण निर्गुण, निराकार, अविनाशी परमेश्वरी तत्त्व के अस्तित्व को अभिव्यक्त करते है। सामान्य व्यक्ति के लिए निराकार तत्त्व की आराधना कठिन होती है। इसलिए भारतीय विचारधार में उदात्त गुण और विचारों के मूल में किसी न किसी सगुण, साकार देवता की परिकल्पना की है। भगवान विश्वकर्मा श्रेष्ठतम गुणों के आदर्श प्रतिक है। तपस्या और समर्पण उनके जीवन चरित्र का प्रमुख अंग रहा है, जिसके आधार पर उनका देवत्व स्वयंसिद्ध है।

इसके पूर्व यह उल्लेख आया है कि विश्वकर्मा का विवाह भक्त प्रल्हाद की सुपुत्री रचना के साथ हुआ था। उनका पुत्र विश्वरूप (त्रिशिरा) अत्यंत बुद्धिमान और बलशाली था। बृहस्पति द्वारा देवों का गुरुपद छोड़ने के पश्चात, यद्यपि विश्वरूप इंद्र के शत्रुकन्या का पुत्र था, उसकी विद्वत्ता के कारण देवों ने उसे गुरुपद पर विराजित किया। विश्वरूप की बढ़ती हुई लोकप्रियता से इन्द्र के मन में असूया होने लगी और कुछ दिनों के बाद उसका वध किया गया। अपने पुत्र के वध के कारण विश्वकर्मा अत्यंत व्यथित हुए। क्रोधवश प्रतिशोध की भावना से

प्रेरित हुए। वे पुनः पुत्र प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या में लगे। तथापि जैसे –जैसे समय बीतता गया उनका क्रोध शान्त होने लगा। उनका विवेक जागृत हुआ और वे अंतर्मुख होकर अपने निश्चय के बारे में सोचने लगे। उनकी तपस्या का होने वाला परिणाम उन्हें अस्वस्थ करने लगा। दुःख और अहंकार के उन्माद में बहकर राष्ट्रनायक इंद्र और अन्य देवताओं का नाश करते हुए अपने ही कृति से राष्ट्र को दुर्बल बनाने की क्रिया उन्हें तिरस्करणीय और असमर्थनीय प्रतीत होने लगी।

परंतु कठोर तपस्या की फल निष्पत्ति भी अपरिहार्य थी। वह होकर रही। उनको वृत्र नामक अत्यंत बलशाली महायोद्धा पुत्र प्राप्त हुआ। वह दुष्ट और दुराकांक्षी था। वह आसुरी वृत्ति का समुदाय साथ में लिए जगत को पीड़ा पहुंचाने लगा। इसलिए वृत्रासूर नाम से ख्यात था। उसके आतंक से सारा भूमंडल भयकुंठित था। सारा देवमंडल असुरक्षा की भावना से भयभीत था। इसलिए सभी उसके नाश की कामना करने लगे। किन्तु उसके वध के सारे उपाय व्यर्थ होते थे। एक बार बुहस्पति को आमंत्रित कर देव

प्रतिनिधि समस्या पर चर्चा कर रहे थे तब बृहस्पति ने उपाय बताया कि यदि घोर तपस्वी दधिचि ऋषि अपनी अस्थि दान करें तो उन अस्थि से निर्मित वज्र से बृत्रासुर का वध संभव है, किन्तु ऐसा वज्र केवल विश्वकर्मा ही बना सकते है। क्या यह संभव था? अपने ही सन्तान की हत्या के लिए शस्त्र बनाना वे कैसे स्वीकार करते? किन्तु राष्ट्र पर छाए आतंक के निराकरण हेतु वह आवश्यक था। अतः देवों का एक प्रतिनिधि मंडल दधिचि ऋषि और विश्वकर्मा से मिला। उन्हें राष्ट्रहित में समर्पित होने का आवाहन किया। एक ओर पुत्रप्रेम और दूसरी ओर राष्ट्रहित ऐसी दुविधा में फंसे थे विश्वकर्मा । किन्तु उनका विवेक और कर्तव्यनिष्ठा जागृत थी। वे वज्र बनाने के लिए राजी हुए। कैसा असीम त्याग है? अपनी कठोर तपस्या की सारी उपलब्धि प्रिय पुत्र वृत्र की राष्ट्रवेदी पर बली चढ़ाने की उन्होंने सम्मति दे दी। दधिचि ऋषि ने अपने अस्थि दान किए और विश्वकर्मा ने उस अस्थि से वज्र निर्माण किया जो इन्द्र को सौंपा गया। इन्द्र ने इस वज्र से वृत्रासुर का वध कर संसार को आतंक से मुक्त किया। विश्वकर्मा और दधिचि अपने कृति से इतिहास में अजरामर हुए। महापुरुषों के जीवन की यही विशेषता होती है कि वे व्यापक जनहित में निजी स्वार्थ को तिलांजलि दे देते है।

महापुरुषों के जीवन से हमें यह भी शिक्षा मिलती है कि हम सद्‌गुणों की आराधना करे, स्वकष्ट से योग्यता प्राप्त करें और पूर्ण विकसित पुष्प के समान ईश्वरी कार्य में समर्पित होने की कामना करें जैसे विश्वकर्मा के अन्य एक पुत्र नल

रामकाज में समर्पित हुए थे। नल एक कुशल इंजीनियर थे। सीता मुक्ति के अभियान में सागर पर सेतु बांधने का काम उन्हीं के नेतृत्व में हुआ था। नल ने अपना दायित्व ऐसी कुशलता से निभाया कि प्रसन्न होकर प्रभु रामचंन्द्र ने "तनयो विश्वकर्माणः" कहकर नल को उनका वास्तविक परिचय देकर गौरान्वित किया।

वांछित लक्ष्य की और चलते, लक्ष्य के अनुकुल पथ प्रदर्शन बन सके ऐसी प्रतिभाएं समाज के सम्मुख प्रस्तुत करनी होती है। कैसे हो वे जीवन चरित्र जिनको हम आदर्श मानकर अनुसरण करें? जिनका कार्य समूचे समाज के हित में हो, जिसके व्यवहार में करनी और कथनी में अंतर न हो, जो अपने मार्ग से कभी पथभ्रष्ट न हुए हो, जिनके चरित्र में सार्वकालिक दिशादर्शन की क्षमता हो, जो अपने कार्य में यशस्वी हुए हो और जिनके जीवन चरित्र के परिशीलन से विजिगिषा जागृत होकर अखण्ड प्रेरणा का सृजन हो सके वे ही चरित्र वास्तविक पूजापात्र हो सकते है। विश्वकर्मा का जीवन इन निष्कर्षो पर खरा उतरता है इसलिए वे हमारे आदर्श है? पूज्य है– उन्हें देवता के रूप में हमने स्वीकारा है।

श्रम को यदि साधना की और समर्पण बृद्धि की जोड़ मिले तो समाज में निःसदेह समृद्धि ही पैदा होगी। श्रम से अर्थोत्पादन होता है और अर्थ ही इच्छापूर्ति का साधन है। अतएव समृद्धि के निर्माण में श्रम का अन्य कोई विकल्प नहीं। विश्वकर्मा ने अपने कार्य द्वारा श्रम को सार्थ बनाया है। श्रम ही यज्ञ है। साधना और अनुसंधान उसके उपचार है। कुशलता इस साधना की उपलब्धि है। "योगः कर्मसु कौशलम्" अर्थात परिश्रम से प्राप्त कौशल्य को ही "योग" संज्ञा दी गई है। यदि पवित्र और समर्पण बुद्धि से कौशल्य का उपयोग होता हो तो, इस योग की रक्षा एवं संवर्धन का दायित्व भगवान स्वयं अपने ऊपर लेते है क्योंकि "योगक्षेमं वहाम्यहम्" यह उनका आश्वासन है।

अपने देश के विकास की प्रक्रिया में आज विश्वकर्मा का स्मरण करना आवश्यक है। विश्वकर्मा ज़यंती के पर्व को "राष्ट्रीय श्रमिक दिवस" के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास भारतीय मजदूर संघ कर रहा है। उनके इस प्रयास की पुष्टि करना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है।

भारतीय साम्यवादी जो राष्ट्रवाद को एक दंभ मानते हैं, हमारे इस प्रयास की खिल्ली उड़ाने में धन्यता मानते है। वे प्रतिवर्ष १ मई को मजदूर दिवस के रूप में बड़े जोर शोर से मनाते है। वैसे तो दुनिया के अन्य देशों में श्रमिक दिवस की तिथियां अलग–अलग है। अमेरिका और कनाडा के राज्यों में हर सप्टेंबर माह के प्रथम सोमवार को ही श्रमिक दिन के रूप में मनाया जाता है और ओरोगीन राज्य

में यह दिन २६ फरवरी को मनाते है। किन्तु साम्यवादी १ मई की उपलब्धियों को अपना ही कर्तृत्व समझकर उनके द्वारा आत्म गौरव के ढोल पिटे जाते है। वास्तविकता यह है कि, ईसाई संत और कामगारों के हितचिंतक संत जोसेफ उन्होंने इटाली में १ मई १५५५ के दिन कामगारों को साम्यवाद के विरुद्ध आंदोलन छेड़ने का आह्वान किया था और इस दिन को कामगार दिन घोषित किया था। यह कामगार आंदोलन के ईसाईकरण का दिवस है। यह तथ्य भी समझ लेना आवश्यक है कि यह दिवस मानवजाति में Haves और Have nots की संकल्पना के आधार पर परस्पर हितशत्रु के रूप में दो वर्ग विद्यमान होते हैं । ऐसी परिकल्पना करते हुए, वर्ग संघर्ष के द्वारा मजदूरों का प्रभुत्व प्रस्थापित होने का विजयी संस्मरण कतई नहीं बन सकता किंन्तु मानव समूह में मजदूर–मालिक के नाम से कृत्रिम भेद पैदा करते हुए इन वर्गों को परस्पर संघर्श के लिए उद्युक्त कर, मानवी जीवन से शांति को उखाड़ फेंकने का यह स्मृति दिन अवश्य हो सकता है। भविष्य में १ मई विजय की नहीं पराजय की स्मृति जगाने में सहायक सिद्ध होगा क्योंकि इस दिवस के पक्षपाती, साम्यवादी विचार धारा पर आस्था रखने वाले जागतिक मंच पर वैचारिक आर्थिक, सामाजिक और राजकीय इन सभी मोर्चे पर पराभव का मुंह देख रहे है। अधिकतर साम्यवादी देशों में राष्ट्रवाद की लहर दौड़ रहीं है। देश को बचाने के लिए "दुनिया के मजदूरों एक हो" या देशवासियों साम्यवाद को बचाओ" ऐसे नारे व्यर्थ सिद्ध हो रहे है। राष्ट्रवाद की भावना साम्यवाद की आस्था पर हावी होती दिखाई दे रही है। जागतिक स्तर पर हो रहे परिवर्तन की ऐसी अवस्था में भारत की जनता को अपने हित में योग्य नीतिका अवलंब करना होगा और राष्ट्रवादी आंदोलन को अधिक प्रखर और दृढ़ करना होगा क्योंकि हर एक राष्ट्र के अस्तित्व का अपना कोई उद्देश्य होता है, कोई जीवन लक्ष्य (Mission) होता है जिसके आधार पर राष्ट्रजीवन विकसित होता है। नर को नारायणत्व की ओर अग्रेसर बनाने का मार्ग प्रशस्त करना यही भारत का मिशन है। यही अपने राष्ट्रजीवन का अंतिम लक्ष्य है। क्या मानसिक गुलामी की अवस्था में यह सम्भव होगा? कदापि नहीं।

राष्ट्रोत्थान के बहुमुखी प्रयास में श्रमिकों का योगदान असाधरण महत्व रखता है। अतः श्रमिक आंदोलन को राष्ट्र संवर्धन की सही दिशा में क्रियान्वित करना आवश्यक बनता है। अपने देश में भारतीय मजदूर संघ इस कार्य में जुटा है। यह संघटन देशहित को सर्वोपरि मानता है। कामगारों को संघटित कर, एक अभेद्य शक्ति के रूप में तन, मन, धन देकर इस देश को परम वैभवशाली, बल

सम्पन्न और आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में खडा करना यह उसकी अभिलाषा है। इसलिए भारतीय मजदूर संघ ने अपने कार्य को त्याग, तपस्या और बलिदान की नीव पर विकसित करने का प्रयास चलाया है। अतः इन गुणों के मूर्तिमंत प्रतीक, भगवान विश्वकर्मा को ही अपने आदर्शों की प्रतिमा मानकर अपनाया है। भगवान विश्वकर्मा जयंती समूचे राष्ट्र में "श्रमिक दिवस" माना जाये इस दृष्टि से यह संघटन प्रयत्नशील है। इस पर्व पर सारे देश भर संघटन के स्तर पर विविध, कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। वैसे भी देशभर "विश्वकर्मा समाज" इस दिवस को बड़े धूमधाम से मनाते हैं, इस दिन औजारों की पूजा की जाती है और उन्हें विश्रांति दी जाती है। कई पूर्वोत्तर राज्यों में विश्वकर्मा जयंती को अवकाश घोषित किया जाता है।

विश्वकर्मा जयंती के संबंध में मुख्यतया दो मत है। देश के कुछ प्रदेशों में यह भाद्रपद शुक्ल पंचमी के दिन तथा अन्य प्रदेशें में माघ शुक्ल त्रयोदशी को मनाने की परिपाटी है। राष्ट्रीय स्तर पर इसके आयोजन में एक सूत्रता लाने के उद्देश्य से भारतीय मजदूर संघ ने प्रारंभ से १७ सितंबर को ही मान्यता देकर राष्ट्रीय श्रमिक दिवस घोषित किया है। विश्वकर्मा जयंती भारत वर्ष के अभ्युदय की साधना का काल निरपेक्ष संकल्प दिन है जो कि राष्ट्र की उपासना के विधि में श्रमिकों के योगदान को सम्मानित करता है और श्रम के महत्व को स्वीकृत करता है। राष्ट्र को पुनः वैभव संपन्न बनाने के किया कलापों में श्रम और श्रमिकों का स्थान गर्वोन्नत रहे और इस स्थान के महत्व को सदोदित वर्धमान रखने हेतु श्रमिकों के दायित्व के लक्ष्य निर्धारित किए जाए। विश्वकर्मा जयंती के अवसर पर हम सामूहिक संकल्प से बद्ध परिकर होकर प्रकृति के सामने नतमस्तक बन अपने श्रद्धासुमनों से उसकी अर्चना करें और उसके गूढ़ नियमों को अनावृत करने का आह्वान करें, जिसमें असीम उत्पादन की क्षमता है।

अलौकिक सद्गुणों की प्रतिमा भगवान विश्वकर्मा की पवित्र स्मृति में हमारा यह राष्ट्रीय कर्तव्य हो जाता है कि अब साधारण महत्वपूर्ण विश्वकर्मा जयंती के दिवस को राष्ट्रीय श्रमिक दिवस के रूप में प्रतिष्ठित करें, श्रमिक क्षेत्र में अपनी राष्ट्रीय अस्मिता जगाएं और अपने कार्यक्षेत्र में अत्यधिक कुशलता प्राप्त करते हुए अपने राष्ट्र को सुसंपन्न, समर्थ और संसार में गौरवशाली बनाने की प्रतिज्ञा करे।

* * *

शहीद बाबू गेनू सईद

लोकमान्य बाळ गंगाधर टिळक और महात्मा गांधी के 'स्वदेशी और बहिष्कार' के हथियार से सन्नद्ध एक आत्मबलिदान था– शहीद बाबू गेनू सईद। एक पागल पीर, अनाम मजदूर। परतंत्र भारत की कांग्रेस पार्टी को चार आने देने वाला एक सामान्य सदस्य, जो विदेशी वस्तुओं से भरी एक लॉरी को रोकने के लिए उसके नीचे सो गया और जिसने अपना शीश देकर 'स्वदेशी–आह्वान' के लिए प्रथम बलिदानी होने का गौरव प्राप्त किया। छोड़ गया एक सबक, आर्थिक गुलामी से मुक्ति का। आइए! कुछ पल उसकी यादों में बिताएं एवं खुद को स्वदेशी के लिए आहुत करने के लिए तैयार करें, जिससे व्यर्थ न हो बलिदान।

पृष्ठभूमि

साम्राज्यवादी ब्रिटिश सरकार ने भारत की सत्ता हथियाने के बाद देश को आर्थिक दृष्टि से जमकर लूटना शुरू किया। इंग्लैंड में चलने वाली फैक्ट्रियों की उत्पादन क्षमता बढ़ाने हेतु उसने आवश्यक कच्चे माल के लिए भारत के संसाधनों का दोहन करना तथा अपने उत्पादों को जबरन भारत पर थोपना शुरू कर दिया। इस प्रकार परतंत्र भारत की आर्थिक ताकत दिनों दिन, और कमजोर होती गई। अंग्रेज तो यह चाहते ही थे कि भारत का आर्थिक ढांचा कमजोर हो ताकि कोई भारतीय स्वातंत्र्य और स्वराज की भाषा न बोल पाए। उन्हें यह भी ज्ञात था कि भारतीयों को एक बार अगर विदेशी वस्तुओं के उपयोग की आदत लग गई तो फिर स्वदेशी, स्वधर्म और स्व–संस्कृति की बातें करने वाला कोई नहीं होगा, बल्कि धीरे–धीरे वे यह भी विस्मृत कर जाएंगे कि विदेशी वस्तुओं को अपनाकर वे एक तरह से राष्ट्रद्रोह कर रहे है। इस प्रकार की मनोरचना के लिए अंग्रेजों ने नई शिक्षा पद्धति भी तैयार की जो भारतीय सभ्यता और संस्कृति को खोखला कर सके एवं आर्ष विचारधारा का समूल नाश कर भारतीयों को पाश्चात्य विचारधारा में तिरोहित कर सके।

लेकिन कई राष्ट्र भक्तों ने अंग्रेजों की इस कूटनीति को भली–भांति ताड़ लिया, जिनमें न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडे अग्रगण्य है। श्री रानडे ने यह महसूस किया कि 'विदेशी वस्तुओं की खेप भेजकर अंग्रेज आर्थिक लूट मचाना चाहते है। अंग्रेजों को अपने उत्पादों को भारत में बेचकर दुहरा फायदा हो रहा है। एक तरफ

तो उनकी उत्पादकता बढ़ रही है, दूसरी तरफ दोयम दर्जे के उत्पादों पर भी वे ऊंची कीमतें वसूल कर रहे है। और चूंकि वे फैक्ट्रियां भारत में नहीं लगने देते, अतः उनकी बाजारी स्पर्धा का भी सवाल नहीं और इस तरह उनका भारत के बाजार पर एकछत्र राज्य है।' श्री रानडे अंग्रेजों की इस आर्थिक लूट के विरोध में खुलकर सामने आए। उन्होंने देश के लोगों को इसके लिए जागरूक करने की सर्वप्रथम कोशिश की।

तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष दादा भाई नौरोजी ने अंग्रेजों की इस आर्थिक लूट की नीति को ड्रेन थ्योरी करार दिया। १६०६ में दादा भाई नौरोजी ने कांग्रेस के अधिवेशन में चार सूत्री विचार रखा जिसमें 'स्वदेशी', 'बहिष्कार', 'राष्ट्रीय शिक्षा,' तथा 'स्वराज' की चर्चा थी। इस विचार का योगी अरविन्द तथा रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसे देशभक्तों ने समर्थन किया तथा ब्रिटिश आर्थिक नीति के खिलाफ जन–जागरण किया।

स्वराज के लिए स्वदेशी

ब्रिटिश आर्थिक नीति को पराभूत करने के उद्देश्य से लोकमान्य बाळ गंगाधर टिळक और महात्मा गांधी ने स्वातंत्र्य संग्राम के दो प्रमुख हथियारों के रूप में 'स्वदेशी' और 'बहिष्कार' का प्रयोग किया। वास्तव में ये दोनों बातें एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, जो अंग्रेजी साम्राज्य के लिए दो अणु बम के समान थे।

'स्वदेशी' केवल वस्तुओं तक सीमित नहीं, इसमें स्वदेश का भाव भी पर्याप्त मात्रा में है। वास्तव में राष्ट्र की अस्मिता का उद्गार है–स्वदेशी। स्वदेश का अभिमान और राष्ट्र प्रेम का साक्षात्कार स्वदेशी वस्तुओं के रूप में सामने आता है। स्वदेशी वस्तुओं में राष्ट्र–भावना के दर्शन होते है।

स्वतंत्रता पूर्व लोकमान्य ठिळक एवं महात्मा गांधी ने नैतिकता की दृष्टि से 'स्वदेशी और बहिष्कार' जैसे हथियार लेकर सत्याग्रह आंदोलन शुरू किया।

महात्मा गांधी ने स्वदेशी के इस शस्त्र को अच्छी तरह से परखा और घर–घर में महिलाओं तक, अति दूर देहातों में भूमिहीन खेतीहर मजदूरों तथा कामगारों तक स्वदेशी का भाव पहुंचाया। महात्मा गांधी ने अशिक्षित एवं अर्द्ध–शिक्षित लोगों को भी राष्ट्र प्रेम से भर दिया।

महात्मा गांधी की अगुआई में देश प्रेम की भावना जल्दी से देश के कोने कोने में पहुंची। लोग ब्रिटिश सैनिकों की लाठी खाने तथा सीने पर गोलियां झेलने को तैयार हुए। ऐसी सामान्य जनता जिसने गांधी जी को देखा भी नहीं था, उनकी

पुकार पर मरने को तैयार हो गई।

बाबू कौन था

शहीद बाबू गेनू सईद भी एक ऐसा ही दीवाना था, जो महात्मा गांधी के आह्वान पर आत्माहुति के लिए भी तैयार था। कांग्रेस पार्टी को चार आने देने वाला यह एक सामान्य सदस्य था, जिसका पंजीयन क्रमांक था – ८१६४ । देश के अनेक मजदूरों में से एक सामान्य मजदूर। अनाम। 'स्वदेशी' और 'बहिष्कार' के आंदोलन ने उसे झकझोर कर रख दिया था। परिणामस्वरूप यह इस आंदोलन में सक्रिय था। 'स्वदेशी और बहिष्कार' राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह में वह भी सहयोगी बना। १२ दिसंबर, १६३० को सुबह ११ बजे मुंबई के न्यू हनुमान रोड पर विदेशी कपड़ों से भरी हुई लॉरी के सामने वह सो गया। अंग्रेज सार्जेंट ने लॉरी उसके सिर के ऊपर से गुजार दी। जिन्दगी की अंतिम सांसें गिनते बाबू गेनू को गोकुल दास तेजपाल रूग्णालय (अस्पताल) में ले जाया गया, जहां १२.३० बजे उसे दाखिल किया गया। डाक्टरों की लाख कोशिश के बाद भी शाम ४.५० बजे बाबू गेनू स्वर्गस्थ हो गया। एक अति सामान्य अनाम मजदूर स्वतंत्रता के लिए शहीद हो गया। शहर भर के सभी समाचार पत्रों ने इसे शीर्ष पर प्रकाशित किया। उसकी अंत्य–यात्रा में लाखों लोग एकत्र हुए। लोगों ने कहा– जिस स्थान पर लोकमान्य टिळक का अंतिम संस्कार हुआ था, उसी स्थान पर बाबू गेनू का भी होना चाहिए। एक दिन में बाबू गेनु इतना महान बन गया कि उसे कन्हैयालाल मुंशी, लीलावती बाई मुंशी, जमनादास मेहता, वीर नरीमन, मदन शेट्टी, मेहेर अली जैसे मुंबई के महान कांग्रेस नेताओं ने श्रद्धांजलि अर्पित की। ये सभी नेता उसकी शव–यात्रा में सम्मिलित हुए। अति सामान्य मजदूर का यह कितना बड़ा सौभाग्य था।

जन्म स्थान

पुणे जिले के आंबेगांव तहसील में पहाड़ियों के पार्श्व में बसा एक गांव है– महाळुंगे पडवळ। यहीं बाबू गेनू का जन्म हुआ था। पुणे जिले का नक्शा आदि सामने रखें तो यह गांव एक छोटे से बिंदु के रूप में दिखाई देगा। यह गांव पुणे –नासिक मुख्य मार्ग पर कलंब गांव से छह किलोमीटर पाश्चिम में स्थित है। पुणे से ७० किलोमीटर दूर इस गांव के पश्चिम की ओर पहाड़ी के ऊपर एक शिव मंदिर है। यह इस गांव का श्रद्धा स्थान है। महाभारत काल में जब पांडव वनवास काट रहे थे, तब इस मंदिर से वे नमस्कार करते हुए आगे बढ़े थे। जिस रास्ते से वे गए थे, उस रास्ते को दिखाते हुए आज भी वहां के श्रद्धावान ग्रामवासी गर्व से कहते हैं कि 'देखों इस रास्ते से पांडव गुजरे थे।' इस महाळुंगे पडवळ की उत्तर

दिशा में छत्रपति शिवाजी महाराज का जन्म स्थान शिवनेरी किला है एवं पूर्व में नांदूर की विट्टलवाड़ी तथा दक्षिण में अवस्थित है साकोरे गांव, जिसके पार्श्व से आंबेगांव तहसील की जीवन–दात्रि लोक माता घोड़ नदी बहती है। इस गांव के दोनों तरफ से बहती हुई दो नहर इसकी रमणीयता को और बढ़ा देती है।

यद्यपि यह गांव निसर्गमय था, तो भी ज्ञानबा सईद की सईदबाड़ी गांव से दो फर्लांग की दूरी पर ही बंजर जमीन भी थी, जहां केवल दो–चार सईद लोगों की झुग्गी–झोपड़ियां ही थी। उपजाऊ जमीन न होने के कारण ज्ञानबा और उसकी पत्नी कोंडाबाई अपना खून–पसीना बहाकर खेती किया करते थे। सुबह से शाम तक कष्ट करने के बावजूद भी अपने परिवार के लोगों का पेट भरना मुश्किल था। हर रोज अगले दिन के भोजन की समस्या बनी रहती थी।

बचपन

ज्ञानबा सईद और कोंडाबाई के दो लड़के थे–भीमा और कुशा। १६०८ में भीमा और कुशा की दरिद्रता में हिस्सा मांगने वाला एक तीसरा भाई भी पैदा हुआ, जिसका नाम रखा गया–बाबू'। बाबू का मातृत्व पितृत्व एवं भ्रातृत्व जल्दी ही बंट गया क्योंकि इसके जनम के डेढ़ –दो वर्ष उपरांत ही कोंडाबाई ने एक और पुत्री को जन्म दिया। शिशु का नाम रख गया–नामी। नामी के जन्म के बाद ज्ञानबा के परिवार में छह सदस्य हो गये। पहले ही खाने के लाले थे और अब तो छह–छह लोगों के खाने का सवाल आ खड़ा हुआ। उसमें भी कोढ़ में खाज की तरह दूर्भाग्यवश ज्ञानबा के दो बैलों में से एक मर गया। ज्ञानबा का एक हाथ ही टूट गया। लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी। जमीन पर फसल उगाने के लिए उसने कठिन परिश्रम किये। परन्तु हाड़–तोड़ मेहनत के कारण ज्ञानबा अपना स्वास्थ्य गवां बैठा। कोंडाबाई के पास दवा–दारू के लिए पैसे कहां थे। इलाज के अभाव में ज्ञानबा के प्राण पखेरू उड़ गये। चार बच्चों के साथ कोंडाबाई रोती–पीटती रह गई। यह १६१० की घटना थी। तब बाबू दो वर्ष का था एवं नामी ५ महीने की। पेट की आग बुझाने के लिए कोंडाबाई तो खुद मजदूरी करती ही थी, भीमा और कुंशा को उसने गांव के अन्य लोगों के पशु–पालन में लगा दिया। समय गुजरने लगा।

समय के साथ बाबू भी बड़ा होने लगा। वह बड़ा होशियार था। एक बार कुछ पढ़ते ही उसे सारी बातें समझ में आ जाती थी। लेकिन उसको विद्यालय भेजना कोंडाबाई के लिए संभव नहीं था। इसलिए बाबू अपने घर का एक बैल, एक गाय एवं दो बकरियां चराने का काम करने लगा। गांव के बाहर कभी

पहाड़ियों के पास तो कभी नहर के पास। बैल कभी –कभी दूसरे लोग किराए पर ले जाते थे जिसके बदले कोंडाबाई को कुछ पैसे मिल जाया करते थे। गाय और बकरियों से बच्चों को थोड़ा–बहुत दूध मिल जाता था।

एक दिन बाबू भागता हुआ घर आया। घबराते हुए मां को बताया कि पहाड़ पर अपना बैल दूसरे बैल से भिड़ गया और लड़ते–लड़ते वह पहाड़ के नीचे गिर गया और मर गया। सुनकर कोंडाबाई स्तब्ध रह गई। यह उसके परिवार का दुर्भाग्य नहीं तो और क्या था? इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बाद उस परिवार में दो पैसे आने का साधन भी नष्ट हो गया। थोड़े ही दिनों में गाय और बकरियां भी बेच दी गई। बाबू अब निठल्ला हो गया। बैल के बिना खेती तो हो नहीं सकती थी। मजबूरन कोंडाबाई ने तीनों बच्चों को पड़ोसियों के घर काम पर लगा दिया और स्वयं नामी को साथ लेकर मुंबई के घोड़ापदेव पहुंची। वहां धाकू प्रभू की वाड़ी में उसका एक भाई रहता था।

दूसरे के पास खेत पर काम करना बाबू के लिए बड़ा कठिन काम था। उसका मन उसमें नहीं लग पाता था। मां के नहीं रहने पर उसमें थोड़ी स्वछंदता भी आ गई थी। वह अपनी मित्र मंडली प्रहलाद राऊत, बाबूलाल एवं शंकर परीट आदि दोस्तों के साथ गपशप लगाता और घूमता–फिरता रहता था। थोड़ी–बहुत तो उसकी पढ़ाई हुई थी। इन मित्रों के कारण बाबू को पुस्तकें पढ़ने की आदत लग गई थी। उसके मित्रों प्रहलाद नाई एवं खंडू परीट धोबी के यहां खाने–पीने की कोई रोक नहीं थी, जिसके कारण बाबू मजदूरी करने से दूर भागता था। बाबू के दोनों भाई जब भी मिलते, उसको उसके स्वेच्छाचार के लिए बराबर धमकाते। परन्तु खेतीहर मजदूर के रूप में बाबू का मन न लगता था, न ही लगा।

बाबू मुंबई में

बाबू अब तरुण हो चुका था। वह मुंबई में मां के पास जाने की सोचने लगा। उसके मन में विचार आते थे कि शहर में उसे कोई दूसरा काम जरूरी मिल जायेगा। वह कुछ नया सीख सकेगा। पर सवाल टिकट के पैसों का था। भीमा और कुशा के पास तो खुद खाने की चिंता थी,। वे बाबू को कहां से मदद कर सकते थे। ऐसे समय में उसने अपने दोस्तों से चर्चा की। उसका मित्र प्रहलाद भी गांव में रहना नहीं चाहता था। एक दिन उसने अपने बाप की जेब से पांच रूपये चुरा लिये और दोनों दोस्त गांव से निकल भागे।.

बाबू अपनी मां के पास मुंबई पहुच गया। उसके यहां पहुंचने से कोंडाबाई

की मुश्किलें बढ़ गई। तीन लोगों के साथ भाई के पास रहना संभव था नही। इसलिए उसने अपने एक रिश्तेदार कोंडाजी नारायण सईद की मदद से गिरन गांव के पास बाराचाली में किराए का एक कमरा लिया। यह बस्ती हिन्दू–मुस्लिम दोनों की एकत्र बस्ती थी। अंग्रेज तो हिन्दू–मुस्लिम को एकत्र देखना नहीं चाहते। उनकी तो 'फूट डालों शासन करो' की नीति होती थी। अत' इस बस्ती में रहना किसी ज्वालामुखी के देहाने पर रहने से कम नहीं था। यहां बराबर दंगे होते रहते थे। पर कोंडाबाई के लिए ज्यादा किराया देना संभव नहीं था। इसलिए उसे मजबूरन इसी बस्ती में रहना पड़ा। दूसरी जगह मकान नहीं लेने का एक खास कारण यह भी था कि कोंडाबाई गिरन गांव के ही एक टैक्सटाइल मिल में काम करती थी। बड़ी हो चली नामी भी उसी इलाके में कुछ लोगों के घरों में बरतन मांज कर कुछ पैसे एकत्र कर लेती थी। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर कोंडाबाई ने परेल के बाराचाली में ही कमरा लिया।

बाबू उसी मिल में काम करने को जाने लगा जिस मिल में उसकी मां काम करती थी। बाबू की मां को मिल के बारे में जान–पहचान हो गई थी। उसी की कृपा से बाबू को भी अस्थायी काम मिलने लगा। जिस दिन बाबू को काम नहीं मिलता उस दिन वह किसी दूसरे मिल के गेट पर जाता था। कभी–कभी बाबू चार मिल दूर अपने बाल मित्र प्रहलाद से मिलने चला जाता। वहां उसके साथ घंटों गप्पे लड़ाता। प्रहलाद चौथी स्टेंडर्ड तक पढ़ा लिखा था। वह विचारों से प्रगल्भ था। सामाजिक और राष्ट्रीय स्थितियों के बारे में उसे बहुत सारी जानकारी थी। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह बाबू से बहुत ही प्रेम करता था। बाबू के कठिन समयों में वह आधी रात को भी मदद करने को तैयार था।

बाराचाली में बाबू राष्ट्रीय विचारधारा के एक मुस्लिम व्यक्ति के सम्पर्क में आया जो पेशे से शिक्षक थे। बाबू उन्हें चाचा कहता था। उसकी यह सोच थी कि 'जिस मिट्टी में मैं पलकर बड़ा हुआ हूं, उसकी मैं संतान हूं। अपने देश को अंग्रेजों की दासता से मुक्त कराना मेरा कर्तव्य है।'

चाचा ने बाबू को अंग्रेजों की बर्बरता, उनकी आक्रमकता तथा अन्याय के बारे में विस्तार से सारी बातें बताई–समझाई। तरूण मिल मजदूर बाबू में देशभक्ति की आग भर दी। उन्होंने बाबू के हृदय को देशभक्ति से ओत–प्रोत कर दिया। उसे उन्होंने रौलेट एक्ट के अन्यायकारक धोखे भी समझाए। जलियॉवाला बाग के भीषण हत्याकांड की तस्वीर भी उसके सामने खींची। बाबू असहयोग एवं सत्याग्रह अब चाचा की कृपा से भलि–भांति समझने लगा। बाबू को जलियांवाला बाग प्रकरण

की जांच करने वाले इंटर कमीशन का महात्मा गांधी द्वारा असहयोग एवं सत्याग्रह आंदोलन अब उद्धेलित करने लगा, जिसने आततायी जनरल डायर को प्रशस्ति–पत्र दे दिया, जिसने हजारों निहत्थों को गोलियों से भुनवा दिया था।

चाचा ने बाबू को यह भी समझाया कि अंग्रेज किस तरह हिन्दू–मुसलमान में फूट डालते हैं, आपसी वैमनस्य फैलाकर दंगे करवाते है। 'जिहाद,' चिल्लाते हुए मार–काट मंचाने वाले मुसलमान अंग्रेजों के कारण ही अत्याचारी बनते हैं और हिन्दुओं के साथ असहिष्णुता का व्यवहार करते है। हिन्दुओं के देवस्थान एवं महिलाओं को भ्रष्ट करने में बड़प्पन का भाव मानते है। ये सारी बातें बताते समय चाचा की आंखों में पानी भर आता।

सन् १६२० के सितंबर में कलकत्ता अधिवेशन में कांग्रेस ने आह्वान किया कि जिन राष्ट्रीय युवकों को सरकारी विद्यालयों में प्रवेश नहीं मिलता और जिन्हें प्रवेश मिल चुका है, ऐसे सभी विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय विद्यालय शुरू करना चाहिए। इस आह्वान पर अनेक शिक्षकों ने अपनी कई वर्षों की नौकरी त्यागकर राष्ट्रीय विद्यालयों में अध्यापन शुरू किया। चाचा भी ऐसी ही श्रेणी के शिक्षक थे। अपनी इस राष्ट्रभक्ति के कारण चाचा को अपने बेटे से भी दूर होना पड़ा।

चाचा का लड़का वालिद चाचा के ठीक विपरीत स्वभाव का था। वह हिंदू–मुस्लिम दंगों में बढ़चढ़ कर भाग लेता था। चाचा को खुश होकर बताता था कि आज हमने इतने हिंदू मारे और इतने हिंदू महिलाओं को भ्रष्ट किया। चाचा वालिद के इस संस्कार से बहुत ही दुःखी होते । आखिरकार एक दंगे में वालिद की जमकर पिटाई हुई। अब वह चाचा को साथ लेकर कराची जाना चाहता था पर चाचा तैयार नहीं हुए। वालिद झगड़कर घर छोड़कर कराची चला गया। चाचा ने मन ही मन मान लिया कि 'मेरा लड़का मर गया।' वे अकेले रह गए क्योंकि उनके एक ही लड़का था। पर जल्दी ही 'बाबू' के रूप में चाचा को एक लड़का मिल गया, जो उनकी बातों को समझ सके एवं उनके मन की कर सके। चाचा ने बाबू को महात्मा गांधी जी का शिष्य बनाया और बाबू को राष्ट्रव्यापी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए अपने प्रतिनिधि के रूप में तैयार किया क्योंकि उस समय तक वे काफी वृद्ध हो चले थे।

कॉटों भरी डगर पर

बाबू गुस्सैल स्वभाव का था। भावना में आकर कुछ भी कर सकता था, लेकिन चाचा ने उसके गुस्सैल स्वभाव पर अंकुश लगाया और महात्मा जी के अहिंसावादी एवं सत्याग्रही विचार से प्रेरित किया। १६२६–२७ वर्ष से स्वतंत्रता

आंदोलन में बाबू और प्रहलाद भाग लेने लगे। वे कांग्रेस के स्वयंसेवक बने। दोनों मिलकर काम करते थे। प्रहलाद राऊत तो बाद में कालबा देवी कांग्रेस कमेटी का पदाधिकारी बना। प्रहलाद के कारण बाबू भी अनेक कांग्रेस नेताओं के संपर्क में आने लगा। मुंबई प्रदेश कांग्रेस के अनेक नेताओं से वह परिचित हुआ। श्री कन्हैयालाल तथा कनुभाई मुंशी, लीलावती मुंशी, श्री नगीन दास टी मास्टर, श्री जमुनादास मेहता एवं वीर नरीमन जैसे बड़े–बड़े नेताओं के साथ बाबू के संबंध शुरू हुए। उनके पास आना–जाना शुरू हुआ। वरिष्ठ नेताओं के घर में बापू की पैठ बनने लगी। धीरे–धीरे कांग्रेस के कार्य से बाबू को इन नेताओं के घर में ही रहना पड़ता था। अभिप्राय यह कि अब बाबू एक सक्रिय कार्यकर्ता था।

१९२७ के मई--जून में देश में सभी जगह जातीय दंगे भड़क उठे। ऐसे समय में बाबू जिस बस्ती में रहता था उसमें बाबू ने प्रहलाद के साथ मिलकर सामंजस्य एवं सौहार्द बनाने का कार्य किया। यह एक ऐसा कार्य था जो बड़े–बड़े नेताओं के लिए भी दुर्लभ था, परंतु स्वयं अतीव विश्वास, निष्ठा और श्रद्धा के कारण इन दोनों ने असंभव को भी संभव कर दिखाया।

उस समय मुंबई, लाहौर, बिहार की कई जगह, बरेली तथा नागपुर आदि २७ जगहों पर हिंदू–मुस्लिम दंगे हुए। परिणामतः २५० लोग मारे गये एवं २५०० लोग घायल हुए। इसमें ज्यादातर हिंदू थे। ऐसी परिस्थिति में भी हिंदू–मुस्लिम दंगे से ग्रस्त इलाकों में भी बाबू और प्रहलाद ने स्वदेशी का प्रचार किया, जो महात्मा गांधी का अंग्रेजों के खिलाफ उठाया गया अमोघ अस्त्र था। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया।

देश भर में खादी का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जाने लगा। बाबू और प्रहलाद कपड़ा मिलों में आठ–आठ घंटे काम करते हुए भी ८–१० घंटे स्वदेशी का प्रचार अनिवार्य रूप से करते थे। बाबू ने अपना एक स्वतंत्र स्वयंसेवक पथक (वाहिनी) संघटित किया। इनकी मदद से कुछ धन संग्रह करके 'चरखा फंड' खड़ा किया। इस फंड से अनेक चरखे उसने खरीद लिए थे। बाबू के दोस्त लोग जो उसके स्वयंसेवक पथक में थे, हर रोज सूत कातने का काम करते थे और खादी का कपड़ा बनाते थे। वे स्वयं तो खादी पहनते ही थे, मिलों में काम करने वाले कामगारों को भी खादी पहनने के लिए प्रेरित करते थे।

इसी काल में बाबू का बड़ा भाई भीमा अपनी पुरानी बीमारी के कारण मर गया। बाबू के दूसरे भाई कुशा का अब तक विवाह नहीं हो पाया था। बाबू ने अपने पारिवारिक दायित्व को समझते हुए अपनी मां कोंडाबाई को कुछ रुपये दिए।

कोंडाबाई नामी के साथ अपने गांव–महाळुंगे पडवळ गई। उसने कुशा का विवाह तय किया। तारीख पक्की हो गई। बाबू को सूचना भेजी गई। उसने विवाह के अवसर पर उपस्थित होने का आश्वासन भी दिया था, लेकिन स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी व्यस्तता के कारण भाई के विवाह में उपस्थित नहीं हो सका।

प्रतिकार

१९२८ में सायमन कमीशन भारत आने वाला था। कांग्रेस उसका घोर विरोध ा कर रही थी। महात्मा

गांधी ने वायसराय लार्ड इरविन को स्पष्ट रूप से कहा कि यदि सायमन कमीशन भारत आता है तो हम पूरी ताकत से उसका विरोध करेंगे। बावजूद इसके ब्रिटिश सरकार ने सायमन कमीशन का कार्यक्रम घोषित किया, जिसके विरोध में सारा भारत 'सायमन वापस जाओ,'– सायमन वापस जाओ' से गूंज उठा।

बापू ने अपनी बूढ़ी मां कोंडाबाई और बहन नामी को वास्तव में इसलिए गांव भेजा था कि उसे स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने में सुविधा हो। बाबू ने ऐसी कोशिश की थी कि माता को लगे कि वह विवाह करने के लिए उत्सुक है। उसने मां को कहा था–गांव में कोई अच्छी लड़की देखो। जैसे कुशा भाई का विवाह हुआ है, वैसे ही बड़े धूमधाम से मेरा विवाह करना। कोंडाबाई को यह बात बहुत अच्छी लगी। वह तो चाहती ही थी कि यह काम जल्दी से जल्दी हो जाए। इसलिए वह अपने गांव में आनंदपूर्वक थी।

बाबू अभी अकेला था। उसने 'सायमन गो बैंक,' सायमन वापस जाओ' के नारे के साथ अपने स्वयंसेवी पथक (वाहिनी) का प्रदर्शन शुरू किया।

योद्धा

३ फरवरी १९२८ को बाबू ने एक बड़ा जूलूस आयोजित किया। मुंबई में उस दिन ऐसे कई जुलूस निकाले गये। प्रदर्शनकारियों ने अंग्रेजों को काले झंडे दिखाए। अंग्रेजों ने उनके ऊपर लाठी–चार्ज किया। वे सत्याग्रही थे, उनकी मार–पीट सहन करते रहे। दिल्ली, कलकत्ता, पटना, लाहौर, चेन्नई, मुंबई आदि बड़े शहरों में जोरदार प्रदर्शन हुए। ऐसे प्रदर्शनों का जोशपूर्ण कार्यक्रम अवर्णनीय था। लाहौर के प्रदर्शनों का नेतृत्व करने वाले लाला लाजपात राय पुलिस लाठीचार्ज में जबर्दस्त रूप से घायल हुए। गंभीर रूप में घायल अवस्था में उन्हें अस्पताल ले जाया गया, परंतु उनके प्राण निकल गए और वे देश की खातिर शहीद हुए।

लाला लाजपत राय की मृत्यु का समाचार देश भर में तीव्र गति से फैल गया।

स्वतंत्रता आंदोलन देश भर में और तेज हो उठा। निःशस्त्र प्रतिकार भी बहुत ही प्रभावी हो सकता है, यह बात सामने आ गई। सामान्य जनता भी स्वतंत्रता आंदोलन के लिए सहायक हो सकती है, यह स्पष्ट हो गया।

क्रांतिकारी–गण लाला लाजपत राय का बलिदान सहन नहीं कर सके। भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरू ने प्रण किया कि लाला लाजपत राय पर लाठी चार्ज करने की आज्ञा देने वाले डी.एस.पी. सैंडर्स का हम वध करेंगे। १७ सितंबर १६२८ को इन तीनों ने सैंडर्स को गोलियों से भून डाला। १६२६ में वायसराय विशेष अधिकार प्राप्त होने वाले विधेयक को पारित करवाना चाहता था। भगत सिंह, बटुकेश्वर दत्त और राजगुरू ने सभागृह में बम फेंके। सभी पकड़े गये और हंसते हुए फांसी के फंदे को गले लगाकर शहीद हुए। इन क्रांतिकारियों में क्रांतिवीर राजगुरू पुणे जिले के खेड़ तहसील का था। उसका गांव बाबू के गांव के नजदीक ही था। इसलिए बाबू को राजगुरू के बलिदान का विशेष अभिमान था। बाबू को काफी प्रेरणा मिली।

१६२६ में रावी नदी के तट पर कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। पं. जवाहरलाल नेहरू अध्यक्ष थे। ३१ दिसंबर १६२६ को कांग्रेस ने संपूर्ण स्वतंत्रता की अपनी मांग घोषित की। पूर्ण स्वतंत्रता की मांग सर्वसम्मति से पारित हुई। २६ जनवरी १६३० को स्वतंत्रता दिवस होगा, ऐसा घोषित किया गया। कांग्रेस सदस्यों और भारतीय नागरिकों को उसी दिन स्वतंत्रता की प्रतिज्ञा लेनी थी।

२६ जनवरी १६३० को पूरे देश में 'संपूर्ण स्वतंत्रता मांग दिवस' के रूप में मनाया गया। संपूर्ण स्वतंत्रता के लिए आंदोलन के लिए कांग्रेस सिद्ध हो गई। इस आंदोलन में बाबू गेनू भी अग्रसित रहा। संपूर्ण स्वतंत्रता की मांग के लिए प्रदर्शन करते हुए बाबू गिरफ्तार कर लिया गया।

१४ फरवरी १६३० को साबरमती आश्रम में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई। उस बैठक में सविनय अवज्ञा आंदोलन' को नया हथियार बनाया गया, जिसकी शर्त यह रखी गई कि इस आंदोलन में भाग लेने वाले सदस्य वही होंगे जिनका अहिंसा के ऊपर पूर्ण विश्वास होगा। 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' का आरंभ ६ अप्रैल १६३० को गांधी जी स्वयं करेंगे और दांडी नामक स्थान पर 'नमक सत्याग्रह' करेंगे, इसका नोटिस वायसराय को दे दिया गया। महात्मा गांधी का कार्यक्रम देश के कोने–कोने में पहुंच गया।

१२ मार्च १६३० को दांडी मार्च शुरू हो गई। बहुत गति से चलने वाले महात्मा गांधी ५ अप्रैल १६३० को दांडी पहुंच गए। ६ अप्रैल को उन्होंने कानून तोड़ा। महात्मा

गांधी और उनके सभी सहयोगियों को अंग्रेज सिवाहियों ने गिरफ्तार कर लिया। जगज–जगह पर असंख्य सत्याग्रही जेल जाने लगे। जेल जाते समय और जेल से बाहर आते समय सत्याग्रहियों का बहादुरों जैसा स्वागत होने लगा। कारावास का भय लोगों के मन से दूर हो गया। लाठी–जार्च, गोली और जेल जैसी बातें जनता के लिए सामान्य हो गई थी।

सत्याग्रह

महात्मा गांधी पर बाबू गेनू की असीम श्रद्धा थी। उसकी धारणा थी कि महात्मा जी के द्वारा अपनाए गए मार्ग से ही देश स्वतंत्र होगा। इसलिए अपने 'तानाजी–पथक' द्वारा बाबू ने 'बडाला' नामक स्थान पर सत्याग्रह किया। बाबू जैसे युवकों के दिमाग में यह बात खटकने लगी की भारत हमारा देश है और यहां के समुंदर के किनारे निसर्ग से, प्राप्त होने वाला नमक लेने से हमें अंग्रेज मना करते है। यदि हम नमक लेते हैं तो हमारा सिर फोड़ते हैं हमें घायल करते हैं , गिरफ्तार करते है। यह बात हम सहन नहीं करेंगे। परिणामस्वरूप देश–भर में सत्याग्रह का आंदोलन तेज हुआ। शांतिपूर्ण ढंग से टोली में बंटकर लोग जगज–जगह सत्याग्रह का आंदोलन तेज हुआ। शांतिपूर्ण ढंग से टोली में बटकर लोग जगज–जगह सत्याग्रह करने लगे। अंग्रेज सिपाहियों ने सत्याग्रहियों के हौंसले पस्त करने के लिए बर्बर लाठी चार्ज किया। परंतु पहले से ज्यादा लोग भाग लेने लगे। सत्याग्रह की शपथ को पूरा करने के लिए उन्होंने हर तरह के अमानवीय अत्याचार सहे। गिरफ्तार सत्याग्रहियों को जानवर से भी बदतर ढंग से गाड़ी में ठूंस कर जेल में भेज दिया गया। जेल में उन्हें कड़ी –से कड़ी सजा दी गई। लेकिन बाबू जैसे सत्याग्रहियों को उसमें भी आनंद मिलता रहा। बाबू और उसका परम प्रिय मित्र प्रहलाद जेल में भी साथियों को देशभक्ति की सीख देते रहे।

बाबू और प्रहलाद जिस जेल में थे, एक दिन गांव से शंकर नाम का एक दोस्त वहां उनसे मिलने आया। शंकर ने बतलाया कि बाबू गेनू की मां मर गई।' बाबू बहुत ही दुखी हुआ। लेकिन उसने कहा– मित्रों अब पूरा मुक्त हो गया हूं, भारत माता को मुक्त करने के लिए अब मैं कुछ भी कर सकता हूं। जेल से बाहर आने के बाद बाबू फिर सत्याग्रह में शामिल हो गया। एक दिन बाबू से मिलने प्रहलाद और शंकर आए। उसने प्रहलाद से पूछा– कभी मेरे कमरे गए थे? चाचा का स्वभाव कैसा है? कैसे हैं वो? बाबू के द्वारा एक साथ बार–बार पूछने पर प्रहलाद ने दुःख भरे स्वर में कहा– 'अब चाचा के कमरे में कोई और रहता है। लोग बतलाते हैं कि शहर में दंगे भड़कने के बाद चाचा बीच– बचाव में जख्मी हो गए। रक्तरंजित अवस्था

में पुलिस उन्हें अस्पताल ले गई, उसके बाद उनका पता नहीं। बस्ती के कई लोग कमरे खाली कर भाग गए है। कोई पहचान का व्यक्ति नहीं दिखाई देता।

चाचा के दुःखद अंत और बस्ती के हालात के बारे में सुनकर बाबू अत्यंत दुःखी हुआ। वह संताप करने लगा कि जब मैं दो बरस का था तभी मेरा बाप मर गया। यहां आने पर चाचा मेरे दूसरे बाप थे। अब मैं लावारिस हो गया, मेरे दोस्त? तीनों मित्र शोकाकुल अवस्था में बैठे थे। इतने में पुलिस आ गई और उन्हें गिरफ्तार कर ले गई। तीनों को न्यायमूर्ति दस्तूर ने छह महीने सश्रम कारावास की सजा दी।

१६३० के अक्टूबर में बाबू गेनू, प्रहलाद और शंकर के साथ जेल से बाहर आया। इतने में उन्हें खबर मिली कि सैडर्स की हत्या करने वाले और पार्लियामेंट में बम फेंकने वाले भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु को वेस्टर्न जेल में फांसी की सजा हो गई। बाबू विषण्ण हुआ। सोचने लगा कि 'इसका बदला कैसे लिया जाए? प्रहलाद ने मार्ग सुझाया। उसने कहा कि '२६ जनवरी १६३० से जो सत्याग्रह शुरू हुआ है, वह निःशस्त्र लड़ने का है, इस पर ही दृढ़ विश्वास रखो। हम लोग दृढ़ विश्वास रखकर सूत कातना, चरखा चलाना, स्वदेशी अपनाना तथा बहिष्कार जैसे आंदोलन के लिए सक्रिय हों। हिंसा की तरफ नही बढ़ें।'

बाबू स्वतंत्रता की लड़ाई का एक योद्धा था। उसने घर–घर जाकर 'स्वदेशी' का प्रचार–प्रसार शुरू कर दिया। विदेशी माल भारत नहीं आने देंगें, लोगों को ऐसी शपथ दिलवाने लगा। बाबू स्वयं तो पूर्ण स्वदेशी था ही, वह लोगों को बतलाने लगा कि स्वदेशी के स्वीकार का महत्व है अपने राष्ट्रीत्व का रक्षण। इससे राष्ट्रभिमान दृष्टिगोचर होता है।

स्वदेशी आंदोलन

महात्मा गांधी के आह्वान में बाबू गेनू जैसे समर्पित कार्यकर्ताओं के प्रयास से 'सूत कातना' एक सुलभ देशभक्ति के साधन के रूप में देश भर में अपनाया गया। घर–घर में महिलाएं, बच्चे और लड़कियां सूत कातने लगे। कार्यालय और फैक्ट्रियों में काम करने वाले कर्मचारियों और मजदूरों को भी सूत कातने में राष्ट्रभक्ति का भाव अनुभव होने लगा। अंग्रेजों के वस्त्रोद्योग के लिए यह एक चुनौती थी। दिन प्रतिदिन तेज होते इस आंदोलन ने उनकी चैन छील ली। महात्मा गांधी स्वतंत्र भारत की कल्पना करते समय आत्मनिर्भर भारत की भी बात करते थे। इसीलिए स्वदेशी की स्पष्ट कल्पना उन्होंने सबको सिखई। वे कहते थे जहां

तक संभव हो सके अपनी सीमा के अंदर बनी हुई स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करो। विदेशी वस्तुओं को बहिष्कृत करो।

स्वदेशी आंदोलन देश का स्वाभिमान जाग्रत करने के लिए था। विषमता, दारिद्रय, बेरोजगारी नष्ट करने के लिए देश को जरूरत थी। इससे उत्पादन प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण संभव था। साथ ही काला बाजार, भ्रष्टाचार, घूसखोरी, मिलावट आदि से उपभोक्ता का संरक्षण भी 'स्वदेशी' से होता है। इस स्वदेशी की पद्धति से जन सामान्य अपने नैसर्गिक परिसर में काम कर सकते है। रोजी–रोटी उपलब्ध कर सकते है। स्वदेशी अपनाने से अपना नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास जन मानस को संभव हो सकता है। इससे पारिवारिक एकात्मता भी संभव हो सकती है और अपने परिसर का प्रदूषण भी बचाना संभव है। महात्मा गांधी को लगता था कि स्वदेशी अपनाने से नये यंत्र युग से जो शोषण और अन्याय हो रहा है और जो जोर–जबर्दस्ती होती है उससे जनसामान्य को बचाया जा सकता है।

यह भी सत्य था कि हस्तकरघा द्वारा उस समय देश की जो आबादी थी, उसके लिए आवश्यक मात्रा में वस्त्र नहीं प्राप्त हो सकते थे। अतः गांधी जी हरेक यंत्र का विरोध नहीं करते थे। उनका केवल इतना कहना था कि विदेश से कपड़े लाने की जरूरत नहीं।

१६३० की दीपावली के बाद विदेशी माल बहिष्कार का आंदोलन जोर पकड़ने लगा। जगह–जगह पर प्रदर्शन होने लगे। स्थान–स्थान पर विदेशी कपड़ों की होलियां जलाई जाने लगीं। मुंबई तो मशहूर बंदरगाह था। विदेशी व्यापार का अंतर्राष्ट्रीय स्थान मुंबई ही था। यहां से देश में सभी जगहों पर माल भेजा जाता था। कांग्रेस ने सोचा कि 'मूले कुठार' की नीति से मुंबई में ही बहिष्कार और विदेशी माल के विरोध में पिकेटिंग करेंगे। यदि मुंबई में सत्याग्रह द्वारा विदेशी माल रोका गया तो स्वाभाविक रूप से यह ज्यादा प्रभावी होगा। इसलिए यहां विदेशी माल रोको। धरना दो। घेरा डालो।

युद्ध की तैयारी

बाबू गेनू उत्तेजित हुआ। अपने 'तानाजी स्वयंसेवक' को तैयार किया। सभी स्वयं सेवकों ने मिलकर तय किया कि विदेशी वस्तुओं का व्यापार करने वालों को ट्रकों से यातायात करने से रोकेंगे। इसकी जानकारी लेनी शुरू की कि कि विदेशी माल कहां से आता है और कहां भेजा जाता है तथा कौन करते हैं यह काम।

जानकारी लेकर उसने तय किया कि १२ दिसंबर को सत्याग्रह होगा। कांग्रेस ने सत्याग्रह घोषित किया।

१२ दिसंबर १९३० को शुक्रवार का दिन था। मुंबई के कालबादेवी इलाके में मैनचेस्टर का गोदाम विदेशी माल से भरा था, जिसे दामोदर खेतसी और कसम रहमान ने खरीद लिया था। इन दोनों ने तय किया कि लॉरियों में भरकर यह माल मुंबई के कोर्ट मार्किट में ले जाएंगे। मैनचेस्टर मिल के प्रतिनिधि जॉर्ज फ्रेंजर को यह जिम्मेवारी सौंपी गई थी। मुंबई के मुलजी जेंठा मार्किट से इंग्लैंड में बने हुए ऊनी कपड़ों को ट्रकों में जाना था, जिनकों रोकने की जिम्मेवारी मुंबई शहर की कांग्रेस पार्टी ने बाबू गेनू एवं उसके तानाजी पथक को सौंपी।

इस आदेश के अनुसार बाबू गेनू ने तैयारी की। उसके सहायक थे प्रहलाद राउत और शंकर आवटे। सत्याग्रहियों ने कालबादेवी रोड पर विदेशी कपड़ों से भरी लॉरिया, ट्रक आदि को रोकने का निश्चय किया। इस कार्यक्रम को घोषित किया गया था। अतः मुंबई के नागरिक सत्याग्रह देखने के लिए उमड़ पड़े।

मि. फ्रेजर को भी इसकी जानकारी थी। इसलिए उसने प्रिन्सेस रोड पुलिस थाने के पुलिस बल को पहले ही बुला लिया था। भारी संख्या में पुलिस आई हुई थी। सुबह दस–साढ़े दस बजे ही सत्याग्रहियों की टोलियां भारत माता की जय–जयकार करती हुई, वंदेमातरम का जयघोष करती हुई आने लगीं। सत्याग्रह देखने के लिए आई हुई जनता भी सत्याग्रहियों के साथ नारे लगाने लगी। ठीक ग्यारह बजे बाबू गेनू के नेतृत्व में तानाजी पथक आया। साथ में प्रहदाल राउत, शंकर आवटे एवं अन्य कार्यकर्ता थे। कालबादेवी रोड पर से विदेशी माल से भरे हुए ट्रक दौड़ने लगे। कपड़ों से भरी हुई एक बड़ी लॉरी आ रही थी। बाबू ने एक कार्यकर्ता घोंडू रेवणकर को कहा–लॉरी रुकवाओं। लॉरी पास आती गई। उस लॉरी के आगे–पीछे पुलिस थी। दूसरे, बग्गी में गोरे सार्जेंट भी थे। इतने बंदोबस्त के बाद भी घोंडू रेवणकर लॉरी के सामने तिरंगा लेकर सो गया। ड्राइवर ने जोर से ब्रेक लगाया। घोंडू के शरीर से एक फुट की दूरी पर लॉरी रुक गई। 'भारत माता की जय,' वंदे मातरम् नारों ने जोर पकड़ा। पुलिस घोंडू रेवणकर को खींचती हुई लॉरी के सामने से दूर ले गई। लॉरी आगे जाने लगी तो दूसरा सत्याग्रही भीमा घोंडू लॉरी के सामने लेटा। पुलिस ने उसे भी घसीटते हुए हटा दिया। देखते ही देखते तीसरा सत्याग्रही. लॉरी के नीचे लेटा था, वह था– तुकाराम नाथू मोहित। लॉरी फिर रुकी। पुलिस ने उसे भी हटा दिया। एक के बाद एक सत्याग्रही लॉरी के सामने लेटते गए और पुलिस उन्हें हटाती रही। पुलिस का गुस्सा बढ़ने लगा।

कुद्ध होकर पुलिस ने बल प्रयोग शुरू कर दिया। सत्याग्रहियों का शोर–शराबा भी बढ़ता गया।

लॉरी थोड़ी–थोड़ी आगे बढ़ती जा रही थी। बाबू गेनू ने अवांज लगाई--भारत माता की.....,' सत्याग्रहियों और दर्शकों ने 'जय' का घोष दिया। आवाज आसमान छूने लगी। लॉरी के सामने अब स्वयं बाबू गेनू था। पुलिस अब तक बहुत कुद्ध हो चुकी थी। अंग्रेज सार्जेन्ट ने लॉरी ड्राइवर से कहा– लॉरी चलाओ, ये हरामखोर अगर मर भी गये तो कोई बात नहीं। लॉरी ड्राइवर भारतीय था, बलवीर सिंह नाम था उसका। उसने लॉरी रोके रखी। लोगों के गगनभेदी नारे गूंजते रहे। अंग्रेज सार्जेन्ट बलबीर सिंह को लॉरी नहीं चलाते देखकर स्वयं लारी में चढ़ गया और लारी चलानी शुरू कर दी। गाड़ी बाबू गेनू की खोपड़ी के ऊपर से गुजर गई। वह गंभीर रूप से जख्मी हो गया। सड़क खून से पट गई।

पुलिस के प्रहार से अन्य अनेक सत्याग्रही भी घायल हुए थे। लॉरी के सामने खून की नदी में बेहोश पड़े बाबू की देह देखकर भीड़ संतप्त हो गई। यद्यपि सभी ने अहिंसा का प्रण लिया था, तो भी प्रतिकिया में लोगों ने अंग्रेज सार्जेंट पर पत्थर फेंकना शुरू किया। लोगों ने गुस्से में आकर सभी लारियों के टायर पंचर कर दिये।

उपचार की औपचारिकता

जख्मी पुलिस, अंग्रेज सार्जेंट, सत्याग्रहियों तथा जिंदगी की अंतिम सांस लेते बाबू गेनू को भारतीय पुलिस अधिकारियों ने नजदीक के गोकुल दास तेजपाल अस्पताल में दाखिल करवाया। बाबू को १२.३० बजे आंपरेशन टेबल पर ले जाया गया, जहां ४.३० बजे उसकी इह लीला समाप्त हो गई।

बाबू गेनू और अन्य सत्याग्रहियों को गोकुल दास तेजपाल (जी.टी.) अस्पताल में रख गया है, यह जानते ही जन समूह कालबादेवी रोड से उस अस्पताल की ओर टूट पड़ा। कुद्ध भीड़ नारे लगाते हुए जी.टी. अस्पताल जाने लगी। सभी लोग चाहते थे कि बाबू के दर्शन हो। जी.टी. अस्पताल के रेलिंग और बाड़ा तोड़कर लोग अस्पताल में घुसने की कोशिश करने लगे। पुलिस ने लाठी चार्ज शुरू कर दिया। कई लोगों के सिर फूटे, कई जख्मी हुए। लेकिन भीड़ नहीं हट रही थी।

तत्कालीन गृह मंत्री जे.ई.बी. हटसन और पुलिस कमीश्नर जी.एस. विल्सन तत्काल जी.टी. अस्पताल पहुंचे। उनके साथ और ज्यादा पुलिस थी, जिसने देखते –देखते भीड़ को तितर–बितर कर दिया।

सायंकाल ५ बजे बाबू गेनू के मरने की खबर बाहर आई। फिर लोग एकत्र

होने लगे। जन–समूह में से हर कोई बाबू गेनू के अंतिम दर्शन करना चाहता था। उनका कहना था कि सभी अपनी टोपी उतार कर जेब में डालें और बाबू का अभिवादन करे। मुंबई शहर के कॉरोनर (अप्रमृत्यु–विचारक) थे।–राव बहादुर बी. एम. आठवले– उन्होंने अपना हैट उतारकर बाबू का अभिवादन नहीं किया जिसके चलते भीड़ में से कई युवकों ने उनके साथ धक्कम मुक्की की। पुलिस वालों ने किसी तरह श्री आठवलजे को छुड़ाया और अस्पताल ले गए। बाबू की मृत देह की कानूनी तौर पर मेडिकल जांच कर श्री आठवले ने निर्णय दिया कि 'अपघात में गंभीर रूप से घायल होने के कारण बाबू की मृत्यु हुई है। इसके बाद बाबू का शव कांग्रेस नेताओं को सौंप दिया गया।

कांग्रेसी नेताओं ने निर्णय लिया कि उस रात अर्थात १२ दिसंबर १९३० को बाबू का शव मांडवी के कांग्रेस हाउस में रखा जाए और शनिवार १३ दिसंबर को सुबह ७.३० बजे शवयात्रा शुरू कर सोनापुर श्मशान भूमि पर अंतिम संस्कार किया जाये। रात को ७ बजे जी.टी. अस्पताल से मौन यात्रा शुरू हुई, जिसमें हजारों नागरिक सम्मिलित हुए। अस्पताल से मांडवी कांग्रेस हाउस तक लोग गए और वहां बाबू का शव अंतिम दर्शन के लिए रख गया।

अंत्यंदर्शन के बाद वापसी मार्ग पर कालबा देवी, पायधुणी, धोतीतलाब आदि स्थानों पर भीड़ ने जगह–जगह विदेशी कपड़ों की होलियां जलाई। पुलिस रात के २ बजे तक होलियां बुझाने का काम करती रही।

१३ दिसंबर को ही बाबू गेनू को श्रद्धांजलि देने हेतु मुंबई शहर में पूर्ण बंद का सफल आयोजन किया गया। शहर के सभी विद्यालय एवं महाविद्यालय बंद रखे गए। व्यापारियों ने भी अपनी दुकानें बंद रखी।

महायात्रा

सुबह ठीक ८ बजे मांडवी कांग्रेस हाउस से बाबू गेनू की शवयात्रा शुरू हो गई। अर्थी पर फूलों के हार चढ़ने लगे। शुरू में मुंबई कांग्रेस के बड़े–बड़े नेताओं ने भी अर्थी को कंधा दिया। उसके बाद बारी–बारी से स्वयंसेवक बाबू की अर्थी को कंधा देते उस स्थान पर ले गये जहां बाबू ने बलिदान दिया था। शव यात्रा अब्दुल रहमान स्ट्रीट, शेख मेमन स्ट्रीन तथा जामा मस्जिद मार्ग से होते हुए उस स्थल तक पहुंची। इस शव यात्रा में हजारों लोग सम्मिलित हुए, जिसमें महिलाएं भी काफी संख्या में थीं। जिस स्थान पर बाबू ने बलिदान किया था, उस स्थान पर शव रखा गया। मंत्र घोष एवं धार्मिक आचार के बाद, यात्रा फिर गिरगांव रास्ते

पर चलने लगी। लेकिन लोग शव सोनापुर की तरफ ले जाने के बजाय चौपाटी की ओर ले जाने लगे। उनका कहना था कि लोकमान्य टिळक का जहां अंतिम संस्कार हुआ था, बाबू गेनू की भी अंत्येष्टि वहीं होनी चाहिए। यह बात पुलिस और अंग्रेज सार्जेंटों को मंजूर नहीं थी। उन्होंने मिलिट्री भी बुला ली। मिलिट्री ने लाठी चार्ज किया जिससे लोग तितर बितर होने लगे और उनका शोर–शराबा बढ़ने लगा।

कांग्रेस नेताओं ने जन–समूह को शांत किया और कहा कि बाबू की आत्मा को यह कतई नहीं पसंद होगा कि उसके चलते और लोग शहीद हों। इसलिए हम लोगों को शांतिपूर्वक पूर्व निर्धारित जगह सोनापुर में ही बाबू का अंतिम संस्कार करना चाहिए। अंततः यात्रा का मार्ग फिर बदला गया। सोनापुर पहुंचने के बाद दोपहर दो बजे से कई लोगों ने श्रद्धांजलि भाषण दिए। बापू के गांव महाळुंगे पडवळ के लोग भी इस अंत्येष्टि में सम्मिलित थे जिन्होंने बाबू को भावभीनी श्रद्धांजलि दी। उन्हें बापू के इस बलिदान पर गर्व था, जिनके गांव का नाम बाबू ने पूरे देश में प्रसिद्ध किया। शाम को एसप्लेनेड मैदान पर बाबू गेनू को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए विराट सभा हुई। उसके पूर्व बाबू गेनू अमर रहे के नारे लगाते झुंड के–झुंड लोग मैदान में आते रहे। सभा की अध्यक्षता श्रीमंती लीलावती मुंशी ने की। श्रीमती लीलावती ने कहा–"बाबू गेनू किसी दुर्घटना में नहीं मरा, उसने बलिदान किया है। अंग्रेजों ने मारा है उसे। अब वे कहते हैं कि बाबू लॉरी से टकरा कर मरा है– यह झूठ है। कारोनर या जी.टी. अस्पताल के डाक्टर्स से अंग्रेज कुद भी कहलावाएं पर बाबू मरा नहीं शहीद हुआ है। अंग्रेजों ने जान बूझकर उसकी हत्या की है। घटना के कई साक्ष्य यहां उपस्थित है। बाबू हुतात्मा बन गया। उसका बलिदान व्यर्थ नहीं जाएगा। इस सभा में उपस्थित लोग स्वदेशी अपनाने की शपथ लें यही बाबू गेनू को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।"

श्री जमनालाल मेहता ने कहा– "स्वदेशी आंदोलन को हम आगे बढ़ाएं यही बाबू गेनू के प्रति हमारी श्रद्धांजलि होगी।"

इस सभा में यह प्रस्ताव आया कि जहां बाबू ने बलिदान किया उस पथ का नाम गेनू पथ रख दिया जाए। उसके बलिदान की जगह उसी दिन से तीर्थस्थली बन गई। कालांतर में उस पथ का नाम 'हुतात्मा बाबू गेनू पथ ' रखा गया । पुणे और अन्य शहरों में अनेक चौकों को बाबू गेनू चौक नाम दिया गया। उसके गांव महाळुंगे पडवळ में बाबू गेनू की प्रतिमा स्थापित की गई है। उसी गांव में 'हुतात्मा बाबू गेनू विद्यालय' भी स्थापित किया गया है। हरेक बरस १२ दिसंबर को वहां

बाबू गेनू स्मृति दिवस के रूप में मनाया जाता है। उसके नाम से स्वतंत्रता सेनानियों को सरकार ने एक कांस्य पदक दिया। जब १९६९ में मुंबई आजाद मैदान पर कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था तो कार्यकर्ताओं ने अधिवेशन स्थल का नाम 'हुतात्मा बाबू गेनू नगर' रखा था। आंबेगांव तहसील में एक तटबंध तैयार हुआ तथा एक बड़ा जलाशय निर्मित किया गया जिसका नाम 'हुतात्मा बाबू गेनू सागर' रख गया।

ऐसे बाबू गेनू का हरेक वर्ष १२ दिसंबर को राष्ट्रभक्त नागरिकों को स्मरण करना चाहिए। 'स्वदेशी का स्वीकार एवं विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार' बाबू गेनू को दी जाने वाली सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

जय भारत

जय स्वदेशी

गणेश शंकर विद्यार्थी

संक्षिप्त परिचय

शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म ननीहाल प्रयाग के अतरबुईयया मोहल्ले में कुंआर सुदी १४ रविवार संवत १९४७ सन १८९० ईसवी को माता श्रीमती गोमतीदेवी के उदर से हुआ था। जब वे गर्भ में थे उनकी नानी ने स्वप्न में गणेशजी की प्रतिमा उनकी माता श्रीमती गोमती देवी के हाथ में दी थी। परिणामस्वरूप जन्म उपरान्त उनका नाम गणेश रखा गया। जन्म के समय उनकी आंखें छोटी थीं किन्तु आयु के साथ सामान्य हो गईं तथा वे परिवार के लिये धन्यधान्य की भरपूरता का कारण बने। वे ढाई तीन वर्ष अपने ननीहाल नाना असिस्टेन्ट जेलर मुंशी सरजू प्रसाद के यहां रहे जहां जेल की ताजी डबल रोटी खाने के आदी होकर कालान्तर में इसे निर्भिकतापूर्वक राष्ट्र उत्थान में जेल जाते समय खाते रहे। वे उर्दू, फारसी, अंग्रेजी तथा हिन्दु के सशक्त कलम के धनी थे जबकि हिन्दी द्वितीय भाषा के रूप में सीखी थी। १९०७ में एन्ट्रेन्स पास किया । अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने की मनोवृत्ति उनमें बचपन से थी, बाकी शिक्षा पाठशाला, कॉलेज इलाहाबाद में हुई । ४ जून १९०९ में उनका विवाह हरवंशपुर इलाहाबाद के मुंशी विश्वेश्वरदयाल की पोत्री से हुआ। ६ फरवरी १९०८ में करन्सी से ३०/– माहवार की नौकरी की तथा २७ नवम्बर १९०९ में नौकरी छोड़ दी। १ दिसम्बर १९०९ से कानपुर के पृथ्वीनाथ हाईस्कूल में अध्यापक की नौकरी पर लगे। ५ दिसम्बर १९१० में इसे भी छोड़ दिया। उनकी रूचि लेखन में थी। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जी की पत्रिका सरस्वती में उनके प्रारंभिक लेखों का प्रकाशन होता रहा। हितवार्ता, कर्मयोगी, उर्दस्वराज्य, तथा हिन्दु फ्रेन्ड्स एसोसिएशन के कानपुर में मेम्बर होकर २ नवम्बर १९११ से 'सरस्वती' के सहसम्पादक के रूप में कार्य प्रारंभ किया। उन्होंने कहा **''मातृभूमि की सेवा करना हर एक मनुष्य का कर्तव्य है। इतिहास का प्रचार देशोद्धार का एक बड़ा उपाय है। मेरा यह कर्तव्य है कि मैं मातृभूमि की सेवा अपने विश्वासानुसार जहां तक बने करूं।''**

१९१६ से १९१८ में एनीबेसेन्ट के होमरूल आन्दोलन के समय कानपुर के २५ हजार मजदूरों के दमन शोषण के खिलाफ बड़ा आन्दोलन किया। वे आम आदमी तक पहुंचे तथा १९२० में अपनी लेखनी के माध्यम से **'प्रताप'** द्वारा मार्गदर्शन किया। यही समय था जिसने विद्यार्थी जी के खिलाफ धारा ५०० का मुकद्दमा चला जिसने सारे देश में खासकर उत्तरप्रदेश में धूम मचायी। सर हार्टफोर बटलर का

सिंहासन डोल गया। १६२० से १६२४ तक बिहार, बंगाल, पंजाब, मध्यप्रदेश, मध्यभारत इत्यादि प्रान्तों में सहज रूप से जाने लगे। १६२५ के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन के वे स्वागत मंत्री रहे। १६२६ से १६२६ तक प्रांतीय कार्यकारिणी के सदस्य रहे। यही कारण था कि उनकी शहीदी पर जब करांची कांग्रेस की वैठक में पंडित जवाहरलाल नेहरू को तार द्वारा यह समाचार मिला तो उन्होंने कहा 'मुझे रंज हुआ दिल को समझाने पर भी दिल समझा नहीं। लेकिन रंज की बात क्या? गणेशजी कैसे जिये कैसे मरे और अगर हमसे कोई आरजू करे अपने दिल से प्यारी इच्छा पूरी करना चाहे तो वह हमसे अधिक क्या मांग कर सकता है कि उसमें इतनी हिम्मत हो की मौत का सामना अपने भाईयों की और देश की सेवा में कर सके और इतना खुशकिस्मत हो कि गणेशजी की तरह मरें। शान से वह जिये और शान से वह मरे और मरकर जो उन्होंने सबको सबक सिखाया वह हम बरसों जिंदा रहकर क्या सिखाएंगे। महात्मा गांधी ने एक दिन एक हिन्दु भाई को समझाते हए कहा कि हमारी अहिंसा भीरू, अशक्त, निराधार और डरपोक लोगों की अहिंसा नहीं है। यही है तो उसकी कोई कीमत नहीं गिननी चाहिए, लेकिन हम तो अहिंसा के सचचे साधु हैं, जो मौका आने पर कट जावेंगे, हमें तो गणेश शंकर विद्यार्थी बनना चाहिये। गणेश शंकर विद्यार्थी की तरह ऐसे कितने आदमी हैं जिसने अहिंसा सैनिक का ऊंचा आदर्श हमारे सामने रख दिया। वह इतिहास में अमर हो गया। जब मुझे इसकी याद आती है तो उससे ईर्ष्या होती है।

अतः विद्यार्थीजी का जीवन सामुदायिक सद्भाव के लिये हो गया जो इस देश का सबसे अनूठा बलिदान है। यानि कानपुर के साम्प्रदायिक दंगे में हिन्दू–मुस्लिमों में एकता व भाईचारा स्थापित करने के लिए वे धांय धांय जलते शहर और गली गली में घूमे तथा उन्हें फक्र था 'इस दंगे में मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा, मैंने किसका क्या बिगाड़ा है' । मगर खेद की बात है इस दंगे में साम्प्रदायिक सद्भाव के लिये उन्होंने अपने प्राण की आहुति दे दी जो साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए सर्वश्रेष्ठ बलिदान है। इसलिए सर्वपंथ समादर मंच इनके बलिदान दिवस को साम्प्रदायिक सद्भाव दिवस के रूप में मनाता है।

सर्वपंथ समादर मंच

सर्वपंथ समादर मंच इंदौर में मा. दत्तोपंत ठेंगड़ी जी का भाषण

आदरणीय अध्यक्ष महोदय, मंच पर आसीन सभी सम्माननीय महानुभाव और इस सभागृह में उपस्थित इंदौर के सम्माननीय और समझदार बंधुओं और भगिनी गण!

स्व.गणेश शंकर विद्यार्थी का स्मरण

आज हम श्री गणेश शंकर विद्यार्थी का सम्मान कर रहे है। इसकी भूमिका हमारे आलमगीर गोरी ने आपके सामने रखी। जब 'सर्वपंथ समादर मंच' का यह निर्णय प्रकाशित हुआ, तो दो तरह की आपत्तियां उठायी गईं। कुछ लोगों ने कहा कि 'सांप्रदायिक एकता के बारे में गणेश शंकर विद्यार्थी से भी अधिक अच्छे भाषण देने वाले, लेख लिखने वाले, राजनेता आज भी मौजूद हैं। आप इनका सम्मान कर रहे हैं, उनका क्यों नहीं? दूसरों ने कहा–गणेश शंकर विद्यार्थी कांग्रेस के नेता थे। हमलोग तो कांग्रेस के पक्ष में नहीं हैं फिर क्यों उनका सम्मान करना'?

दोनों का पहले मैं संक्षेप में जवाब देता हूं। आज राजनैतिक दल जातियां हो गई हैं। हर पार्टी यानी एक जाति है। १६३७ ई. तक कांग्रेस राजनैतिक दल नहीं थी। वह राजनीतिक मंच था। जिसके कारण सभी देशभक्त उस मंच पर एकत्रित रहते थे। जिन दिनों गणेश शंकर विद्यार्थी का आत्मबलिदान हुआ, लगभग उन्हीं दिनों में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक व निर्माता परमपूज्यनीय डॉ. हेडगेवार ने व्यक्तिगत हैसियत में कांग्रेस के नेतृत्व में कांग्रेस के झंडे के नीचे मंहात्मा गांधी के आदेश के अनुसार जंगल सत्याग्रह कियां था और जेल गए। लोग इन बातों को लिंक नहीं कर पाते कि वे कांग्रेस के सिपाही के नाते जेल गए थे। हालांकि इधर उन्होंने ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का निर्माण किया था। वे व्यक्तिगत हैसियत से जेल गये कारण, उस समय कांग्रेस कोई पार्टी नहीं थी। १६३७ के बाद वह पार्टी बन गई। इसलिए आज के वातावरण के आधार पर उस समय की कल्पना करना गलत होगा। दूसरी बात यह है कि 'सेकुलर' शब्द का अर्थ समझने की कोशिश भी न करते हुए केवल मुस्लिम वोट बैंक की तरफ नजर रखते हुए सामंजस्य की बात करने वाले नेता बहुत हैं। मुस्लिम वोट बैंक का उद्देश्य ध्यान में रखकर गणेश शंकर विद्यार्थी ने आत्मबलिदान नहीं किया। ऐसा कोई निहित उद्देश्य अल्टेरियल मोटिव लेकर उनका आत्मबलिदान नहीं हुआ। इस विशुद्ध भावना से हुआ कि समाज में एकता होनी चाहिए और उनके बलिदान से हमें संदेश मिलता है कि वास्तव में यदि विभिन्न गुटों में केवल हिन्दू मुसलमान में नहीं, विभिन्न गुटों में भी कुछ स्थायी एकता निर्माण करनी हो तो वह केवल भाषणों से नहीं होती, प्रचार से नहीं होती, टी.वी. रेडियो, समाचारपत्रों से नहीं होती। जब उस एकता के लिए आत्मबलिदान करने वाले ईमानदार लोग तैयार होंगे तभी एकता हो सकती है यह संदेश उनके जीवन से हमें मिलता है। इसलिए हम

गणेश शंकर विद्यार्थी का सम्मान कर रहे हैं।

अभी जो कुछ बातें पूर्व– वक्ता ने बतलायीं वह सभी बातें ठीक हैं। जो वे बोल रहे हैं। मैं उससे शत प्रतिशत सहमत हूं, किंतु मेरा एक ही कहना है कि प्रश्न को ठीक ढंग से समझ लीजिए। राजनेताओं के समान मत कीजिए कि मुसलमानों का वोट चाहिए तो एक अलग बात बोलना, हिन्दुओं का चाहिए तो अलग बात बोलना, जाटों का चाहिए तो अलग बात बोलना, राजपूतों का चाहिए तो अलग बात बोलना, ब्राह्मण ठाकुर का चाहिए तो अलग बात बोलना, फारवर्ड हैं, बैकवर्ड हैं, ओ.बी.सी. हैं दलित हैं–सबके लिए अलग–अलग बोलना।

मैं पूछता हूं कि हिंन्दू–मुसलमान एक हैं क्या? ऐसा नहीं है। आज की व्यवस्था ऐसी है जिसमे तरह–तरह के भेद हैं। केवल हमारे हिंदू –मुस्लिम एकता की बात करने से व्यवस्था में पर्याप्त समाधान हो जाएगा, क्या आप ऐसा समझते हैं? बिहार जैसे प्रदेश में अपरकास्ट और बैकवर्ड क्लास के बीच खून–खराबे तक मारपीट चलती है। कई प्रदेशों में पददलित विरुद्ध सवर्ण और सवर्ण में भी ब्राह्मण –ठाकुर,जाट, गुर्जर के नाम पर खून–खराबे तक मारपीट चलती है तो यह जो एकता का प्रश्न है वह सिर्फ हिन्दू–मुस्लिम तक ही सीमित है ऐसा समझना बिल्कुल गलत है।

यह सोचना होगा कि सारा वातावरण ऐसा क्यों है? इसलिए समस्या को ठीक ढंग से समझना चाहिए। मेरी शिकायत यह है कि हम लोग समस्या को ठीक ढंग से समझते नहीं हैं और फिर सोल्युशन ढूंढ़ने का प्रयास करते हैं। आलविन टॉफलर ने कहा है कि "The right question is more important than right answar to wrong question " गलत प्रश्नों का सही उत्तर देने से ज्यादा महत्वपूर्ण बात है कि प्रश्न ही सही रहे।

इसके लिए सबसे पहले "प्रश्न क्या है?" ये समझना आवश्यक है। जैसे कि केवल हिंदू–मुसलमान में झगड़ा है ऐसा है क्या? मैंने जाट विरुद्ध नांन जाट झगड़े देखे हैं, जांट विरुद्ध गुर्जर मार पीट देखी हैं। ब्राह्मण ठाकुर विरुद्ध बैकवर्ड क्लास का झगड़ा चलता है। झगड़े क्यों हैं? सारे हिन्दू एक हैं क्या? सारे मुसलमान भी एक हैं.क्या? आज हम हिन्दू–मुसलमान एकता की बात करते हैं, सारे मुसलमान भी एक हैं क्या? लखनऊ में हर दो साल में एक बार शिया–सुन्नी मार पीट होती है।–कहते हैं पाकिस्तान इस्लामिक स्टेट है। वहां सिंध के मुसलमान पाकिस्तान से अलग होना चाहते हैं। बलूचिस्तान पाकिस्तान से अलग होना चाहता है, पख्तुनिस्तान पाकिस्तान से अलग होना चाहता है। पंजाब में शिया सुन्नी के झगड़े

चलते हैं, अहमदिया लोगों की पिटाई होती है। इतना ही नहीं जी.एम. सईद जिन्होंने पाकिस्तान का प्रस्ताव सर्वप्रथम सिंध के एसेंबली में रखा। उन्होंने विभाजन की बात की इसलिए उनको पाकिस्तान में भी जेल में रखा गया। वे जब हिन्दुस्तान आए थे तब उन्होंने कहा कि मुझे आज महसूस हो रहा है कि मैंने गलती की। उस समय जो माहौल था उसके बहाव में मैं बह गया। आज मैं समझ रहा हूं कि केवल रिलीजन के आधार पर कोई राष्ट्र निर्माण नहीं हो सकता और इस दृष्टि से यह जो इस्लामिक नेशन नाम की चीज है वह गलत है। जी.एम. सईद ने स्पष्ट रूप से और जोर देकर कहा कि मैं अल्ला का इसलिए शुक्रगुजार हूं कि मुझे अल्ला ने समझदारी आने के लिए आवश्यक जिंदगी दी जिसके कारण मैं यह सब महसूस कर रहा हूं और भाषण दे रहा हूं। यदि मैं पहले मर जाता तो पाकिस्तान जिंदाबाद कहते हुए मर जाता।

आपसी झगड़े दोनों में हैं

इसी तरह क्या दुनिया के सारे मुसलमान एक हैं? इराक और इरान का झगड़ा क्या हिंदू–मुसलमान का झगड़ा है? इराक और कुर्द का झगड़ा क्या हिन्दू और मुसलमान का झगड़ा है? क्या सारे अरब कंट्रीज एक हैं? अमरीका के प्रलोभन में आकर सऊदी अरब एवं इजिप्ट ने इराक के खिलाफ मोर्चा लगाया था। यह क्या हिंदू–मुसलमान का झगड़ा था? आप जरा गौर से सोचिए। प्रश्न को ठीक ढंग से फ्रेम कीजिए। Framing of question is more important इसलिए कारण क्या है वह पहले समझ लेने की आवश्यकता है। केवल हिंदू–मुसलमान का सवाल उठाना वास्तविकता से दूर की बात है, क्योंकि ये सारे तो मुसलमानों के आपस के झगड़े हैं हिंदूओं के आपस के झगड़े हैं।

झगड़ें क्यों हैं?

झगड़े क्यों हैं, यह प्रश्न है? इस दृष्टि से कुछ महत्व की बातें मैं बोलना चाहता हूं। पहली बात यदि हिंदू एक रिलीजन है इस्लाम एक रिलीजन है, और यदि दोनों अलग–अलग रिलीजन हैं, तो दोनों में हमेशा एकता ही होगी यह बात संभव नहीं। कभी होगी, कभी नहीं होगी किंतु हम सर्वपंथ समादर मंच वालों का विश्वास है कि हिंदू–मुसलमान एक होंगे इसका कारण है। पहली बात कि हम हिंदू–मुसलमानों में यूनिटी नहीं चाहते क्योंकि हिंदू यदि एक यूनिट हैं, तो मुसलमान दूसरा। हमारे पूर्व के वक्ता ने कहा कि सहिष्णुता रहनी चाहिए, क्या गारंटी है कि सहिष्णुता रहेगी ही। सहिष्णुता न रखने से यदि मेरा लाभ होता है, तो मैं सहिष्णुता क्यों रखूं? यदि अलग दो यूनिट हैं तो दोनों में एकता होनी

चाहिए। दोनों में सहिष्णुता होनी ही चाहिये ये आप जैसे "सरमन" देते हैं सरमन देते जाइए, पर हमेशा ऐसा होगा नहीं। हम हिंदू–मुस्लिम यूनिटी नहीं चाहते हैं। हम समझते हैं कि हिंदू मुस्लिम इज वन सोसायटी। दोनों में अन्तर समझ लीजिए। यूनिटी का मतलब होता है कि दो यूनिट हैं। हमारा कहना है कि दो यूनिट नही हैं एक ही यूनिट है। और एक ही के बीच में झगड़े है। जैसे मुसलमानों में भी झगड़े हो सकते हैं। हिंदूओं में झगड़े है वैसे हिंदू–मुसलमान झगड़े भी हो सकते हैं। यूनिट एक है इसलिए हम यूनिटी नहीं चाहते। 'वन्नेस' है। हम चाहते नहीं हैं वह वस्तुस्थिति है It is already there वह पहले से विद्यमान हैं। लेकिन राजनैतिक लोगों ने अपने स्वार्थ के कारण झगड़े कराये। केवल हिन्दू–मुसलमानों में ही नहीं बेकवर्ड (पिछड़े) फारवर्ड (अगड़े) के, दलित सवर्ण के हैं, तरह–तरह के झगड़े अपने स्वार्थ के लिये, गद्दी के लिये कराते हैं। यह उसी का एक भाग (Part) है। It is a part of the whole and not a seperate question यह प्रश्न का एक नाम है अलग प्रश्न नहीं है क्यों कि सम्पूर्ण समाज एक है तो (not unity but onenen) **एकता नहीं बल्कि सम्पूर्ण एक, यह सर्व पद समादर मंच की भूमिका है कृपया आप इसे ठीक से समझ लीजिये।**

स्वराज प्राप्ति के बाद

दूसरी बात–मतभेद। राजनेता मतभेद खड़े करते हैं । ये अलग बात है । मुझे इस संबंध में एक घटना याद आती है–१२ साल पहले लखनऊ में एक सेमिनार था– जस्टिस मुर्तजा अध्यक्ष थे, मैं वक्ता था। विषय था–माइनॉरिटी एज्यूकेसन्स वगैरह–वगैरह.....। सारी बातें आप लोग जानते ही हैं । पूरा बताने की आवश्यकता नहीं। पहले हमारा भाषण हुआ। बाद में मुर्तजा हुसैन बोलने के लिए खड़े हुए। उन्होंने सीधे मेरी तरफ देखकर कहा कि मि. ठेंगडी. आपके बोलने का यह मतलब दिखता है कि यहां का मुसलमान राष्ट्र की मुख्यधारा में शामिल नहीं है। यदि आपका ये कहना है तो मैं आपके प्रति प्रश्न करना चाहता हूं कि वे इसमें शामिल क्यों नहीं हैं ये बताइये। (Who is responsible for it) इसके लिए कौन जिम्मेदार है? फिर उन्होंने कहा कि मुझे ठीक–ठीक स्मरण है मैं जब बच्चा था, गांव में था। हमारे गांव में कोई हिंदू –मुसलमान समस्या नहीं थी। हमारे मुहर्रम में हिंदू शामिल होते थे। होली दीपावली में हम शामिल होते थे। मैं शहर आया कालेज पढ़ाई के लिए तो मैं झुग्गी झोपड़ी में रहता था। गरीब था, वहां कोई हिंदू –मुसलमान समस्या हमने देखी नहीं।

स्वराज प्राप्ति के बाद में ये जो हिंदू–मुस्लिम समस्याएं इतनी आ रही हैं,

इसका क्या कारण है? और आज की परिस्थिति में मुसलमानों में मुख्य प्रवाह के साथ एकात्म होना चाहिए ये कहने का मि. ठेंगड़ी आपको नैतिक अधिकार है क्या? Have you got moral right to say that Muslim should be one with the national mainsteream ? एक कारण बताता हूं– हम मुसलमान यहां बैठे हैं। हमारे पास अलग– अलग राजनीतिक दल के हिंदू नेता आते हैं। फिर हमको बताते हैं कि ये बहुजन समाज आपको खा डालेगा। आपको हमारी पार्टी ही बचा सकती है। हमे वोट दीजिए। एक पार्टी कहती है कि हम आपको तीस प्रीविलेजेज देते हैं। दूसरे पांलिटिकल पार्टी के हिंदू नेता आकर कहते हैं कि हमारी पार्टी आपको पचास प्रीविलेजेज देती है। क्या आपका कहना है कि जब पावर हंगरी हिंदू राजनीतिक नेता हमारे सामने खुले आम संघर्ष कर रहे हैं कि मुस्लिम वोट प्राप्त करने के लिए मुसलमानें को ज्यादा से ज्यादा प्रीविलेजेज कौन सी पार्टी देगी, और आप हमारे सामने यह प्रतिस्पर्धा कर रहे है। तब हम कहें कि नहीं–नहीं हम तो भोले–भाले है। हम तो प्रीविलेजेज नहीं चाहते । हम तो मुख्यधारा में शामिल हो जाएंगे। काहे को शामिल होंगे। तो उनका वाक्य था कि आप यदि चाहते हैं कि मुस्लिम मुख्यधारा में आना चाहिए तो आप पहले सत्ता लोलुप राजनीतिक नेताओं को कान पकड़कर ठीक कीजिए। उन्होंने कहा कि पहले राजनैतिक नेताओं को मुख्यधारा में लाइए। ये नेता लोग स्वयं ही मुख्यधारा में नहीं है। मुसलमान हैं या नहीं, यह अलग सवाल है। जस्टिस मुर्तजा हुसैन का कहना था कि राजनीतिक नेता सत्ता लोलुप है। वे प्रधानमंत्री बनने के लिए देश तक को तोड़ने के लिए तैयार हो रहे हैं। राजनीतिक नेता जब ठीक हो जाएंगे तो मैं आपको आश्वासन देता हूं कि एक साल के अन्दर मुस्लिम राष्ट्रीय मुख्यध ारा में शामिल हो जाएंगे। ये बारह साल पहले की बात है। लखनऊ में पब्लिक मीटिंग में ये सब हुआ।

सत्य की विजय

थोड़ी मानसिकता समझ लीजिए। What is Psychology ? और इस दृष्टि से और कुछ बातें। प्रचार से ज्यादा दिन तक लोगों को गुमराह नहीं किया जा सकता, न सांप्रदायिक प्रचार से न ही सांप्रदायिकता विरोधी प्रचार से। जो–सत्य होगा उसी की विजय होगी। जो सत्य है वो अपने पैरों पर खड़ा होता है। टी.वी. रेडियो और समाचार पत्रों के पैरों पर सत्य खड़ा नहीं होता। हां सत्य की विजय होने में समय लगेगा। लेकिन विजय सत्य की ही होगी।

सत्य क्या है? जरा देखा जाए। हिदू नाम का यदि कोई एक रिलिजन है तो बाकी रिलिजन के साथ हमेशा एकता होगी ही यह गलत बात है। फैक्ट यह है कि हिंदू नाम का कोई रिलिजन है ही नहीं, और न ही कभी रहा होगा। अगर था तो कहां गया वो रिलिजन? हुआ यह कि यूरोपियन्स आए। उन्होंने यहां देखा एक मुसलमान समाज है, कुछ ईसाई हैं, बाकी हिंदू है। उन्होंने सोचा हिन्दू कोई रिलीजन होगा क्योंकि यूरोप का बैकग्राउण्ड था इसलिए रिलिजन का अर्थ धर्म किया। जबकि धर्म अलग बात है, रिलिजन अलग। हम लोग भी रिलिजन का प्रयोग धर्म के नाते करते है। और हिंदू धर्म ,मुसलमान धर्म , ईसाई धर्म ऐसा कहते हैं। परंतु धर्म अलग–अलग नहीं है। रिलीजन्स अलग है। धर्म का संबंध केवल उपासना पद्धति से ही नहीं है। रिलिजन का संबंध उपासना पद्धति से है। उससे भी ज्यादा – Religon is a relation between the man and its Maker जो भी अल्टीमेट (परम सत्ता) होगा, कोई उसको ब्रह्मा कहे, विष्णु कहे, अल्ला कहे फादर कहे, या होवा कहे। तो मनुष्य और अल्टीमेट इसके बीच में जो रिश्ता है वो रिलिजन है। इसलिए बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि– Religon is personal पंथ व्यक्तिगत है Dharms is social धर्म सार्वजनिक है) केवल उपासना पद्धति भर नहीं। धर्म धारण करने वाली चीज है। व्यक्ति–जीवन को धारण करने वाला व्यक्ति धर्म, परिवार जीवन को धारण करने वाला परिवार, धर्म सामाजिक राष्ट्रीय जीवन को धारण करने वाला राष्ट्रीय धर्म ,मानव जीवन धारण करने वाला मानव धर्म और विश्व की धारणा करने वाला विश्व धर्म सबके लिये एक ही है और गलती से उसे यदि हिंदू धर्म कहा गया इसका कारण यह नहीं कि इसे हिंदुओं ने बनाया। धर्म एक ही है सृष्टि का धर्म। जैसे गुरूत्वाकर्षण (ग्रैविटेशन) धर्म है। किंतु पश्चिम में उसका सर्वप्रथम साक्षात्कार न्यूटन को हुआ। इसलिए उसको न्यूटन्स लॉ कहते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि न्यूटन के पहले यह नहीं था। वह सनातन है, चिरंतन है। लां ऑफ ग्रैविटेशन– गुरुत्वाकर्षण के प्राकृतिक नियम का साक्षात्कारी पुरुष पश्चिम में भले ही न्यूटन था परंतु हमारे यहां पहले ही इसका साक्षात्कार हो चुका था। जैसे लां ऑफ रिलेटिविटी सनातन है चिरंतन है। पश्चिम में आइन्स्टीन ने पहले पहल उसका साक्षात्कार किया इसलिए लॉ आफ रिलेटिविटी को आइन्सटीन्स लॉ कहते हैं। किंतु यह आइन्स्टीज का बनाया हुआ नहीं है, उन्होंने केवल देखा। वैसे ही पहले पहल धर्म देखने वाले हिंदू थे इसलिए उसे हिंदू धर्म कहा गया। वो धर्म है हिदू– धर्म नहीं है। पहले देखने वाले हिंदू थे, यह ऐतिहासिक घटना है।

हिंदू नाम का रिलीजन नहीं

धर्म एक अलग चीज है– और रिलिजन अलग। और हिंदू नाम का कौन सा रिलिजन है? मैं चैलेंज देकर बताता हूं कोई मुझे सिद्ध करे कि हिंदू नाम का कोई रिलिजन है। कौन है इसका प्राफेट? इसका एक बुक कौन सा है? वेदों को मानने वाले हों या वेदों को न मानने वाले वृहस्पति से लेकर चार्वाक तक, मेटेरियलिस्टिक फिलांसोफी मानने वालों ने कहा वेद वगैरह सब धूर्त लोगों ने बनाया है, हम नहीं मानते इसको। वे भी हिंदू है। आपस में झगड़ा करने वाले अलग–अलग रिलिजन्स के हिंदू हैं। हिंदुओं का रिलिजन्स हैं , वैष्णव हैं , शैव हैं, शाक्त हैं, आस्तिक हैं, नास्तिक हैं। नास्तिक भी हिंदू हैं। अलग–अलग रिलिजन थे हिंदुओं के। हिंदू नाम का कोई रिलिजन नहीं है। जैसे किराना माल की दुकान पर आप साइन बोर्ड देखते हैं। इस दुकान में सौ चीजें मिलती है, दो सौ चीजें मिलती हैं, पांच सौ चीजें मिलती है। किंतु यदि आप १०० रू. का नोट देकर कहेंगे कि भई किराना नाम की चीज दीजिए। तो दुकानदार दे सकता है क्या? क्योंकि किराना नाम की कोई चीज नहीं है, किराना एक अंब्रेला नाम है। उस छाता के अंदर सौ दो सौ, पांच सौ चीजें आ सकती हैं। वैसे ही हिंदू नाम का कोई रिलिजन नहीं है किंतु उसमें सभी समांयोजित होते हैं, यह किसी संघ के स्वयंसेवक ने नहीं बंल्कि महात्मा गांधी ने कहा कि हिंदू के अंतर्गत इस्लाम क्रिश्चियतसिटी झोराइज्म आसानी से समायोजित हो सकते हैं यदि ठीक ढंग से समझ लिया तो। महात्मा गांधी ने ऐसा क्यों कहा होगा? कारण स्पष्ट है कि हिंदू नाम का रिलिजन नही हैं। और जैसे विभिन्न रिलिजन्स के हिंदू एक दूसरे से समायोजित होते हैं वैसे ही इस्लाम क्रिश्चियन झोराइज्म भी एकांमोडेट हो सकते हैं– ऐसा गांधी जी का विश्वास था।

हिंदू दृष्टिकोण

लेकिन जहां हिंदू रिलिजन नहीं वहां रिलिजन के बारे में हिदुओं का एक दृष्टिकोण है– Hindu view of Relegion वह दृष्टिकोण क्या है? तो जैसे कोई यदि यह कहता है कि सालवेशन कैन वी हैड थ्रू लार्ड विष्णु एलोन– यह हिंदू स्पिरिट नहीं है। किंतु यदि यह कहता है कि लार्ड विष्णु के द्वारा भी, शिव के द्वारा भी, दूर्गा के द्वारा भी, ये हिंदू स्पिरिट है। किन्तु दुर्गा के द्वारा ही ये हिदू भावना नहीं है। वैसे कोई यदि कहता है कि सालवेशन केन बी हेड थ्रू मोहम्मद प्रांफेंट आलसो– हंडरेड परसेंट हिदू है। थ्रू जीसस क्राइस्ट एलोन– नांट हिदू। थ्रू जीसस क्राइस्ट आंलसो परफेक्टली हिंदू। ये थोड़ी समझ लेने की बात है। आज के

राजनेताओं के जो भाषण हैं बिलकुल गैर जिम्मेदाराना होते हैं। गैर जिम्मेवार राजनेता बेईमान राजनेता प्राइम मिनिस्टर बनने के लिए जनता को गुमराह करते हैं। देश के टुकड़े करने वाले समाज के टुकड़े करने वाले राजनेताओं को आप प्रमाण मत मानिए। सत्य क्या है? इसको जरा देखिए। तो इस दृष्टि से हिन्दू व्हयू ऑफ रिलिजन के अनुसार दो रिलिजन में एकता हो ये मैं नहीं कहता क्योंकि हिंदू नाम का रिलिजन है ही नहीं और यदि कोई रिलिजन हो तो उनमें एकता ही होगी ये गारंटी आप दे नहीं सकते।

मतभेद स्वाभाविक

दूसरी बात देखिए। आपने ठीक बात कही कि भई मतभेद हैं। अब राजनेता तो जानबूझकर भेदों को उभारते हैं। किंतु वैसे भी मतभेद होते ही हैं। कहां नहीं होते है? परिवार में भी मतभेद होते हैं। अब पांडवों के जैसा कोई परिवार था। किंतु वहां भी मतभेद हुए क्योंकि परिवार में अलग–अलग लोग हैं , उनकी अलग–अलग प्रवृत्ति है , अलग–अलग मानसिक पृष्ठभूमि है और इसलिए एक ही घटना पर अलग–अलग प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं। द्रौपदी वस्त्र हरण का प्रसंग था। भीम ने कहा कि मैं दुःशासन को पीटता हूं। युधिष्ठिर ने कहा कि चुपचाप बैठो। भीम ने कहा कि सहदेव थोड़ा अग्नि लाओ मैं अपने युधिष्ठिर दादा के हाथ जलाना चाहता हूं। इससे ज्यादा और मतभेद क्या हो सकते हैं? क्या इसी के कारण एकदम दो गुट हो गए? फैक्शनलीज्म हो गया है ऐसा नहीं कहा जा सकता। परिवार में भी अलग–अलग टेंपरामेंट है। अलग–अलग टेंडेंन्सी है , अलग –अलग मेंटल बेकग्राउंड है, इसके अनुसार अलग–अलग रिएक्शन्स होंगे ही। परिवार की भावना यह इतनी बलवान है कि सभी मतभेदों को समेटकर परिवार एक है। इसलिए पांडवों का परिवार एक रहा।

ध्येय एक होते हुए भी सबकी भावना एक होते हुए भी इंफैसिस (दबाव जोर) में फर्क हो सकता है। जैसे कि किसी के घर में लड़की है। विवाह योग्य हो गई है, सभी परिवार वालों की इच्छा है कि अच्छे घर में इसका विवाह होना चाहिए ताकि इसका जीवन सुखी हो और इसकी शादी अच्छे ढंग से होना चाहिए ताकि गांव वाले कह सके कि शादी बहुत अच्छी हुई। किन्तु सबकी इच्छा, है। सबका मत एक ही रहेगा क्या? अनुभव के आधार पर हमारे पूर्वजों ने कहा 'नहीं प्रायोरिटीज अलग–अलग होती है। अपने विवाह के बारे में लड़की सोचती है कि लड़का स्वरूपवान है कि नहीं लड़का हैंडसम है कि नहीं? माने बाकी चीजें उसके सामने नहीं रहतीं ऐसा नहीं। लेकिन उसके सामने प्राथमिकता है कि लड़का

स्वरूपवान है कि नहीं? माता की प्राथमिकता रहती है कि परिवार की आर्थिक आमदनी कैसी है। कहीं ऐसा न हो कि वहां शादी होने के बाद सारा जीवन दूसरों के यहां बर्तन मांजने और कपड़े धोने में बिताना पड़े। पिताजी उससे भी प्रसन्न नहीं है। वे कहते है कि आज तो परिवार समृद्ध होगा लेकिन कल यदि अर्थव्यवस्था टूट जाती है गरीब हो जाता है तो क्या इस लड़के में ये ताकत है कि सारी सम्पत्ति खोने के बाद फिर से अपने कर्तृत्व के आधार पर वह अपने परिवार को ऊपर ला सकता है। तो– एज्युकेशनल क्वालीफिकेशन उसका क्या है यह पिता की प्राथमिकता रहती है। याने बाकी बातें वो मानता नहीं ऐसा नहीं है। वह भी चाहेगा कि लड़का स्वरूप में अच्छा हो। आज की फाइनेन्सियल पोजीशन अच्छी हो, लेकिन इससे पिता संतुष्ट नहीं । तो लड़के के अंदर एक बार गिरने के बाद फिर से उठकर खड़ा होने की ताकत है कि नहीं यह पिता देखता है। अब बाकी जो रिश्तेदार हैं उन्हें इतने गहराई में जाने के लिए उनकी इच्छा भी नहीं और टाइम भी नहीं है। वे केवल चाहते है कि हमारे बराबरी का खानदान हो बाकी सब चल जाएगा। आप और हम भी तो लड़की के विवाह में सहानुभूति रखते है। किंतु हम क्या चाहते है ? तो कहा गया है कि मिष्ठान्नं इतरे जनाः। जलेबी कैसी हो इसकी। लड्डू कैसा था। हमारा कन्सीडरेशन इतना ही है–

कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिताश्रृतम्
बांधवाः कुलमिच्छन्ति मिष्टान्नं इतरेजनाः।

(कन्या रूप चाहती है, तो माता धन, पिता ज्ञान, वांधव कुल, तो अन्य लोग मीठा भोजन चाहते हैं)

तो सारे लड़की का अच्छा चाहते है, लड़की की भलाई चाहते हैं। लेकिन हरेक की प्राथमिकता अलग अलग हैं तो इसके कारण एकदम यह समझना कि मतभेद हो गये हैं ऐसा नहीं है। मतभेद अलग बात है, मनभेद अलग बात है।

जहां तक मतभेद का सवाल है तो परिवार का क्या आप में से कई लोगों ने अनुभव किया होगा कि खुद का खुद के साथ भी मतभेद होता है। आप जरा अपने अपने जीवन का विचार कीजिए खुद का खुद के साथ भी मतभेद होता है।

हमारे एक नेता मित्र थे। मैं उनका नाम लेना नहीं चाहता क्योंकि यहां के लोग उनकों अच्छी तरह से नाम से जानते हैं। उनको डायबडीज था। परहेज नहीं करते थे। डायबीटीज बढ़ने लगा। आखिर डॉक्टर ने उन्हें कहा कि देखे अब मैं वार्निंग देता हूं। अभी यदि पथ्य का पालन नहीं किया तो आप मर जाओगे। स्पष्ट

कहा। तो थोड़ा सा असर हुआ। फिर नेता ने तय किया अब मीठा नहीं खना चाहिए। एक दिन वे प्रवास में जा रहे थे। मैं अपने प्रवास में जा रहा था। संयोग से मैं उनके डब्बे मैं चला गया। आगे हम दोनों को दूर तक जाना था। बीच में एक स्टेशन पर उनके कुछ लोग उनका सम्मान करने के लिए आये थे। हार वगैरह साथ में लाए थे।

नेता नाराज हो गया और कहा– तुमने पुष्प हार लाया उपहार नहीं लाया? एक बोला 'नहीं साब' उपहार नहीं लाया। फिर एक पुराने कार्यकर्ता ने उनके हाथ में एक डिब्बा दिया। नेता ने पूछा क्या है? तो कार्यकर्ता ने कहा ये बर्फी का डब्बा है। नेता बोले– बर्फी का डब्बा है? तुम मेरे दुश्मन हो मुझे मारना चाहते हो? डाक्टर ने कहा है कि यदि मीठा खाऊंगा तो मर जाऊंगा। तुम चाहते हो कि मुझे मरना चाहिए।

वह कार्यकर्ता नेता का स्वभाव जानता था । उसने सब सुन लिया और फिर कहा कि जी नहीं आप जानते नहीं, ये बर्फी की एकदम नयी वेराइटी है। ऐसी बर्फी आपने कभी जीवन में खायी नहीं होगी। "अच्छा नई बेराइटी है, फिर मेरे बिस्तर पर रख दो।" उसने बर्फी बिस्तर पर रख दी।

अब गाड़ी आगे चलने लगी। मुझे भी लालच हो गया कि भई ये डिब्बा है तो कम से कम बर्फी की एक दो पिसेस मुझे भी मिलेगी। आपको आश्चर्य होगा एक भी पीस मुझे नहीं मिला। इसका मतलब है कि खुद का खुद के साथ मतभेद हो सकता है। पहले बर्फी नहीं खायेंगे। फिर नयी वेरायटी है ठीक है।" चुपके से यदि खा लेंगे दवा ले लेंगे। बाद में इंसुलिन के चार इंजेक्शन लेंगे। आपत्ति क्या है? तो खुद का खुद के साथ भी मतभेद हो सकता है। तो इसमें ये समझना कि मतभेद हो गया झगड़े हो गये ऐसा समझना उचित नहीं और इंस दृष्टि से मान लीजिए यहां कोई मुसलमान नहीं। सारे हिन्दू हैं तो हमेशा एक ही मत रहेगा क्या? हर विषय पर अलग अलग मत होते हैं। वे कहते हैं कि ऐसी पार्टी होनी चाहिए जिसमें कोई मतभेद नही हो। मैने कहा कि कैसे होगा? हमारा प्लुरलिस्टिक बहु आयामी समाज है। रिलिजन की बात छोड़िये। उदाहरण के लिए समझिये कि एक ही राजनीतिक दल है। मान लीजिए उस दल के मीटिंग में प्रश्न उठना है कि चंडीगढ़ कहां जाना चहिए। हरियाणा या पंजाब किसमें जाना चाहिए? सौ लोगों ने कहा कि पंजाब को देना चाहिए। आल राइट ये सौ लोगों का एक गुट हो गया। अगला सवाल आया कि एजुकेशनल सिस्टम में १०+ २ + ३ ये कायम रहे या उसको खत्म किया जाय। आप क्या समझते हैं कि चंडीगढ़ को पंजाब में देना चाहिए। ऐसा कहने वाले सौ

लोगों का ग्रुंप १०+ २+ ३ के बारे में एक ही ग्रुप में रहेगा। उसमें से कुछ कहेगा ये रहना चाहिए, कुछ कहेगा ये नहीं रहना चाहिए। मान लीजिए एक ग्रुप कहता है कि १० + २+ ३ खत्म होना चाहिए जिसमें सौ लोग है। फिर सवाल आंया कि टैक्सेशन में डायरेक्ट टैक्सेशन ज्यादा रहें या इन्डायरेक्ट टैक्सेशन ज्यादा रहे? आप क्या समझते है। जो कह रहे है – १०+ २ + ३ खत्म होने चाहिए ऐसे सौ लोग टैक्सेशन के सवाल पर एक ही ग्रुप में रहेंगे। उसमें से कुछ कहेंगे डायरेक्ट, कुछ कहेंगे इनडायरेक्ट टैक्सेशन। और मान लीजिए सौ लोग कहते हैं इनडायरेक्ट ठैक्सेशन नहीं होना चाहिए। क्या वे सारे लोग यदि राम जन्म भूमि का सवाल आया तो सब एक ही ग्रुप में रहेंगे? कोई कहेंगे होनी चाहिये। कोई कहेगे नहीं होना चाहिए। हमारा प्लुरलिस्टिक समाज है। और बहुआयामी समाज में सोचना कि मतभेद नहीं होना चाहिए यह गलत है । मतलब है कि We are quarrelling writh the facts । असलियत ही ऐसी है वो केवल रिलिजन के कारण नहीं है। समाज ही प्लुरलिस्टिक है।

तो प्रश्न को ठीक ढंग से समझने की आवश्यकता है और इसलिए इसको केवल हिंदू–मुस्लिम प्रश्न के रूप में देखना उचित नहीं है। हमारी बात वननेस एक रसता, एकात्मकता की है। आप जरा दोनों में अंतर समझ लीजिए। Whole society is one .We dont want society to unite इसलिए हम सहिष्णुता शब्द को पसंद नहीं करते। क्यों सहिष्णुता? इसलिए हमने समभाव शब्द भी नहीं लिया। हमने कहा समादर। दोनों में अंतर है। समभाव में समता है । समादर में हम समझते हैं कि आदर की भावना से हम दूसरे को देखते हैं। हमारी शब्दावली देखिये। टर्मिनोलोनी इज वेरी इम्पांर्टन्ट। शब्दावली का अतीव महत्व है। दूसरी बात यह है कि हमें आज की परिभाषा में बोलना है। हमारी टर्मिनोलांजी, हमारी भावना हमने बताई।

किंतु आज जो घोर सांप्रदायिक है और जो सांप्रदायिकता फैला रहे हैं वे ही कह रहे हैं कि हिंदू मूस्लिम यूनिटी हो। जो दलित सांप्रदायिकता फैला रहे हैं वे ही कह रहे हैं हिंदू–मुस्लिम युनिटी हो। साम्प्रदायिकता नष्ट हो। ये डेमोनिंग है, ऐसा नहीं होना चाहिए। यदि हमे वास्तव में सोचना है तो इसके लिए केवल ऊपर से उसके पत्ते काटने से विष वृक्ष नष्ट नहीं होता। विष वृक्ष की जड़ कहां है यह हमें देखना पड़ेगा। जड़ से उखाड़ना पड़ेगा। तो जड़ कहा है? इसकी स्टडी जब तक नहीं होती, अध्ययन नहीं होता तब तक इस विष बेल को नष्ट नहीं किया जा सकता है। तो संक्षेप में हम थोड़ा देखें कि इसकी जड़ कहां है?

विष बेल की जड़ कहा है?

पुरानी जड़ है। उसको जब तक नहीं समझते तब तक केवल पत्ते काटने से और भाषण देने से काम नहीं होगा। कहां से डेविएशन शुरू हुआ है ? ये जानना चाहिए। संक्षेप में मैं बताना चाहता हूं। पहले यहां जो स्वराज्य था। १८१८ में पुणे में जो पेशवाओं का हेडक्वार्टर था, शनिवार बाड़े पर जो भगवाध्वज लहरा रहा था उसको नीचे लाया गया। अंग्रेजी का यूनियन जैक वहां लहराया गया। कुछ क्षण हमारे स्वराज्य की समाप्ति हुई। अंग्रेजों का शासन शुरू हुआ। तो वो क्षण कि भगवा ध्वज स्वराज्य का नीचे उतारा गया। अंग्रेजी साम्राज्य का युनियन जैक ऊपर चढ़ाया गया। उसका थोड़ा यदि विचार करेंगे तो ध्यान में आयेगा कि अंग्रेजों की नीति क्या थी? ये काम किसने किया? किसी अंग्रेज ने नहीं किया। अंग्रेजों के कहने पर एक हिंदू ने । इतना ही नहीं पेशवा के जाति वाले एक हिंदू ने जिसका नाम था बाला जी पंत नातू। पेशवा के जाति का था उसने भगवे ध्वज को नीचे उतारा। उसने यूनियन जैक को लहराया। विचार कीजिए कि अंगेजों की नीति क्या थी?

दूसरा बिंदु लीजिए। कहा जाता है कि मुस्लिम कम्युनलीज्म के पहले शानयाने– सर सैयद अहमद थे। प्रारंभ से ऐसा था क्या? सर सैयद अहमद के पहले भाषण रहे हैं कि हिंदू और मुसलमान एक ही शरीर की दो आंखें हैं। एक ही देश का शरीर है। उसकी दो आंखें हिदू और मुसलमान हैं। कोई भी आंख यदि घायल हो जाती है तो दूसरी आंख को धक्का लगेगा ही। ये भाषण देने वाले सर सैयद अहमद थे। उनका संपर्क हो गया अंग्रेजों के साथ। भाषा बदल गई। ये ध्यान में रखिये। किंतु दोनों के बीच मे जो पॉइंट है वह १८१८ शनिवार बाड़ा इधर सर सैयद अहमद इसके बीच में जो है वह ध्यान में रखने लायक है।

१८१८ के बाद और १८५७ के पूर्व स्वतंत्र्य संग्राम ऐसा नहीं कहा जा सकता। छिट–पुट लड़ाइयां अलग–अलग जातियों ने अलग टाइम में अंग्रेजों के खिलाफ की होगी। बेशक स्वातंत्र्य संग्राम १८५७ का था। अंग्रेजों ने दुनियां में इसको मिसइंटरप्रेट किया। हिंदुस्थान में किया। और अंग्रेजों की मानसिक गुलामी करने वाले अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों ने अंग्रेजों की टर्मिनोलांजी स्वीकार की और कहा कि यह सिपाही लोगों का विद्रोह था। यह सिवाही लोगो का विद्रोह नहीं था अपितु यह स्वातंत्र्य संग्राम था। सावरकर ने पहली बार एक किताब लिखकर सिद्ध किया कि १८५७ का युद्ध भारत का स्वतंत्रता संग्राम था। सावरकर की किताब सरकार ने पब्लिश होने के पहले प्रोस्काइब की थी। उन्होंने स्पष्ट कहा कि ये स्वतंत्रता संग्राम ही था।

सिपाही लोगों का यह विद्रोह नहीं था। १८५७ के लड़ाई का स्वरूप क्या था? इसमें नाना साहब पेशवा , सेनापति तात्या टोपे, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और तीनों ने घोषणा की थी कि बहादुरशाह जफर हिन्दुस्थान के बादशाह हैं। दिल्ली के बादशाह के नाते इन्होंने बहादुरशाह जफर के नाम की घोषणा की थी। जफर इन लोगों के साथ थे। अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने में बहादुरशाह जफर शामिल थे। लेकिन जब सारा मामला उल्टा होने लगा तो सावरकर जी ने अपने इंडियन वार आफ इंडिपेडेंस में लिखा है कि कोई एक उनसे सहानुभूति रखने वाले जफर के पास गये और कहा कि--

''दमदमे में दम नहीं अब खैर मांगों जान की।
ए जफर ठंडी हुई शमशेर- हिंदूस्तान की''।

हिन्दुस्थान की शमशेर ठंडी हो गई । अब अंग्रेजों के पास जाकर अपने जान की खातिर खैर मांगिये। तो बहादुरशाह जफर ने जवाब दिया

गाजियों में बू रहेगी जब तलक ईमान की।
तब तो लंदन तक चलेगी तेग हिन्दूस्तान की।।

उस समय ये राजनेता नहीं थे। तथाकथित सेक्युलरिस्ट, बेईमान सेक्यूलरिस्ट राजनेता उस समय नहीं थे। बहादुरशाह जफर ने कहा कि तब तो लंदन तक चलेगी तेग हिंदुस्थान की। यह वायुमंडल था।

स्वार्थी नेता लोग

सारे जहां से अच्छा के निर्माता मु. इकबाल का पूर्व वक्ता ने उल्लेख किया। आपको आश्चर्य होगा कि डिवाइड एंड रूल पौलिसी के कारण भेद करो झगड़े लगाओ और शासन करो इस नीति के कारण केवल मुसलमानों में नहीं हर जाति में, हिदू भी अलग –अलग हो गये थे।

क्या आप समझते हैं कि आज की परिस्थिति में हम हिंदू हैं ऐसा कहना लाभदायक है? आज तो बिल्कुल नहीं। यहां तक कि कुछ साल पूर्व रामकृष्ण मिशन के लोगों ने भी कलकत्ता हाईकोर्ट के सामने एफिडेविट दिया था कि-- हम तो हिंदू नहीं, हम तो रामकृष्णाइट हैं। इसलिये हम माइनोरटी कम्युनिटी है। कारण आज के संविधान में माइनोरटी बनने में हरेक को लाभ है। जहां रामकृष्ण मिशन के सन्यासी कहते हैं हम हिंदू नहीं रामकृष्णाइट हैं, मुसलमानों ने कहा तो कौन सी बड़ी बात हो गयी। आज का कांस्टीट्यूशन ही ऐसा है जिसमें हिंदू न होना

लाभदायक है। हिंदू होना गलत काम है। तो इस परिस्थिति में शुरू से 'डिवाइड एंड रूल पौलिसी' चल रही थी और कुछ मुसलमान ऐसा समझते थे कि भई अलग रहने से हमारी सौदे की ताकत रहेगी। बारगेनिंग पावर रहेगी। हम एक हो जाएंगे तो हमारी पावर क्या रहेगी? मुझे स्मरण होता है कि बाबा साहब अंबेडकर की मृत्यु के पश्चात जो रिपब्लिकन पार्टी का चला तो हमारे बच्छराज जी व्यास का और मेरा सारे अम्बेडकराइट्स के साथ अच्छा संबंध था। बच्छराज जी एक अंबेडकरराइट नेता को परम पूजनीय गुरुजी के पास लेकर गये। गुरुजी ने कहा कि भई तुम्हारा सब कहना ठीक है। दलितों पर अन्याय हुआ उसका परिमार्जन होना चाहिए। उसके लिए क्या–क्या होना चाहिए आपने सब ठीक कहा। लेकिन आप अलग पार्टी क्यों बना रहे है? शिड्यूल कास्ट फेडेरेशन बनाकर किसी नेशलन पार्टी में शामिल होइये। किसी में भी शामिल हो जाइये। उस समय जनसंघ था। बोले 'आप जनसंघ में जाइये, कांग्रेस में जाइये, शोसलिस्ट पार्टी में जाइये, कम्युनिस्ट पार्टी में जाइये ये सब नेशनल पार्टी हैं। किसी भी नेशनल पार्टी में जाकर आप यदि ये बात बोलेंगे तो नेशनल पार्टी होने के कारण इस बात का प्रभाव ज्यादा होगा। आप नेशनल पार्टी में शामिल क्यों नहीं होते? तो उस नेता ने स्पष्ट कहा "गुरुजी आप हमको मूर्ख मत समझिये। आज हम शिड्यूल कास्ट फेडेरेशन बनाये हैं। हमारे शिड्यूल कास्ट में एज्यूकेटेड लोगों की संख्या कम है। हम थोड़े एजुकेटेड लोग आसानी से नेतृत्व कर सकते हैं। हम नेशनल पार्टी में जाएंगे तो हमें कौन पूछेगा? वहां क्वालिफिकेशन की दृष्टि से हमसे अधिक कई बड़े लोग हैं। हम तो पिछड़ा बैंक बेंचर बन जायेंगे। हमें यदि लीडर के नाते रहना है तो सेपरेट शिड्यूल कास्ट फेडरेशन रखना ही आवश्यक है"।

ऐसा समझने वाले मुस्लिम लोग भी थे। किंतु समझदार मुस्लिम लोग राष्ट्रीय धारा में थे। राष्ट्रवादी थे। कांग्रेस में थे। कई लोगों को आश्चर्य होगा कि जिन्ना वाज ए स्टांन्च नेशनलिस्ट। मु. इकबाल वाज ए स्टांन्च नेशनलिस्ट। शौकत अली मो. अली वेअर नेशनलिस्ट । यहां तक कि अमृतसर में कांग्रेस का अधिवेशन १९१९ में हो रहा था। उसी समय छिंदवाड़ा जेल में शौकत अली और मुहम्म्द अली थे, उनकी रिहाई भी हुई। कहीं इधर उधर न जाते हुए वे दोनों सीधे अमृतसर पहुंचे और सबके सामने शौकत अली मुहम्म्द अली ने उस समय लोकमान्य टिलक जो राष्ट्र नेता थे उनके चरण स्पर्श करते हुए वहां बैठ गये। ये शौक्त अली मुहम्म्द अली थे। बैरिस्टर जिन्ना, टिळक जी के भक्त थे राष्ट्रीय नेताओं में उनकी गिनती थी। जिस समय लाला लाजपत राय अमेरिका छोडकर फांर द फर्स्ट टाइम अमरीका से आये मुम्बई बंदरगाह पर उनका स्वागत करना था। कांग्रेस ने अपने ओर से तीन

लोगों को डेप्यूट किया था। एक थे लोकमान्य टिळक , दूसरे थे डॉ. एनी बैसेंट, तीसरे थे बैरिस्टर जिन्ना। इससे आपको कल्पना आयेगी। सर्वप्रथम सेपरेट इलेक्टोरेट की जब बात की गई तब बैरिस्टर जिन्ना ने जगह –जगह मुसलमानों की सभाएं लेकर उन्हें समझाया कि सेपरेट इलेक्टोरेट गलत है। आज लोग ये विचार जानते नहीं। इसी कारण इसका बीज कहां है जड़ कहा है ये नहीं जानते। ये मु.इकबाल की और बाकी राष्ट्रीय मुसलमानों की प्रवृत्ति थी।

अंग्रेजों द्वारा बीजारोपण

अग्रेजों ने चाल चली। उन्होंने कहा कि हिंदू मुसलमान यदि एक हो जायेंगे तो हम उन्हें स्वराज देकर चले जायेंगे। अब रणनीति में उसको जबाब देना था। लोक मान्य टिळक उस समय राष्ट्र नेता थे। लखनऊ के कांग्रेस अधिवेशन में १६१६ में वहां उन्होंने हिंदू मुस्लिम पैक्ट किया। लेकिन मुसलमान के प्रतिनिधि के नाते फिरंगी ने किसको रिकागनाइज किया। वो राष्ट्रवादी थे। कांग्रेस के अनुकूल थे कांग्रेस में थे। उनको प्रतिनिधि के नाते मान्यता दी। ये तो केवल जबाव देना था। वे लोग अंग्रेजों को जानते थे कि केवल पैक्ट होने से अंग्रेज जाने वाले नहीं

टिळक जी के मृत्यु के बाद एक नया युग शुरू हुआ जिसको गांधी युग कहते हैं। प्रारंभ से ही पहले ही जो पालिसी थी उसको छोड़कर दूसरी पालिसी शुरू हुई। सबसे पहले खिलाफत मुवमेंट के बारे में बे. जिन्ना ने पब्लिकली गांधी जी को कहा था कि आप खिलाफत मूव्हमेन्ट के बारे में मुहिम में हैं। खिलाफत मूवमेंट को सपोर्ट करेंगे। लेकिन इसके कारण मुसलमान कांग्रेस में आयेंगे आप ऐसा समझते हैं तो ऐसा नहीं है। और एक्चुअली हुआ यही। तुर्किस्तान में खिलाफत मुवमेंट को किसी संघ वालों ने एबोलिश नहीं किया , न किसी आर.एस.एस. वालों ने। मुस्तफा कमाल पाशा ने खिलाफत को एबोलिश किया। वहां के लोग डिपुटेंशन लेकर गये। उन्होंने कहा कि ये आउट डेटेड एजेंसी है, इसको में नहीं रहने दूंगा। तुर्कीस्तान के मुसलमानों ने मान लिया। तुर्कीस्तान के शासक मुस्तफा कमाल पाशा ने मान लिया। इधर हिंदू खिलाफत कब पुनर्जीवित हो इसके लिए पैसा दे रहे थे , ये आंदोलन कर रहे थे, खिलाफत के उत्थापन के लिए जेल जा रहे थे और तुर्कीस्तान के मुसलमान नहीं। यहां के मुसलमान डेपुटेशन लेकर गये और कमाल पाशा को कहा साहब खिलाफत का पुनर्जीवन होने दें। कमाल पाशा बोले मेरे तु र्कीस्तान में नहीं होगा। अब यहां के मुसलमान यहां के हिंदुओं को लेकर गये थे। उन्होंने सोचा यहां हिंदुओं के जैसे ये भी लालच में आ जायेगे तो उन्होंने कहा कि आप हमारी बात नहीं समझे। हम चाहते है कि खिलाफत का पुनर्जीवन हो और

हम आपको ही दुनिया का खलीफा घोषित कर दे। इसी प्रकार आप तुर्कीस्तान के सुलतान भी रहेंगे और दुनिया के खलीफा भी हो जायेंगे। उन्होंने कहा कि ये मैं कुंछ नहीं चाहता। सिद्धांत के नाते मैं खिलाफत का विरोधी हूं। वहां विरोध ? और यहां भारत मे गांधी जी के कहने पर खिलाफत का पुनर्जीवन हो, इस मांग के लिए हिंदू जेल में जा रहे थे। बेरिस्टर जिन्ना ने इसके खिलाफ बोला, माना नहीं तो जो कांग्रेस को, राष्ट्रीयता को गाली देगा, लात मारेगा उसके सामने झुकने का नया युग १६२० के बाद शुरू हुआ।

कांग्रेस की गलत नीतियां

मोपला विद्रोह riot हुआ। जिन्ना ने कहा कि अब मोपना विद्रोह का निषेध करना चाहिए क्योंकि वह स्पष्ट रूप से हिंदुओं के विरोध में था। लेकिन गांधी जी ने उसका स्वागत किया। सारा एक के बाद एक हो रहा ऐसा दिखाई दिया। जो मुसलमान नेता कांग्रेस में राष्ट्रीय मुख्य प्रवाह में थे उनको लगा कि जो लात मारेगा उसके सामने झुकना और हम यदि कांग्रेस के साथ हैं, राष्ट्रीय मुख्य प्रवाह में है। तो We are taken for granted घर की मुर्गी दाल बराबर, ऐसा हमारे बारे में सोचा जाता है। यदि हम भी उनको गाली देना शुरू करेंगे तो ये हमारे सामने झुकेंगे। हमारे दाढ़ी को हाथ लगाएंगे। आश्चर्य तो होता है कि एक समय कहने वाला "सारे जहां से अच्छा हिंदोस्ताँ हमारा" उसी ने पाकिस्तान की संकल्पना क्यों दी होगी? उसका कारण है कि कांग्रेस की नीति ही ऐसी थी जो लात मारेंगे उनके सामने झुकना।

और मुसलमानों के साथ डायरेक्टली कांटेक्ट न करते हुए ये जो सौदेबाजी करने वाले लोग बीच में थे उनके साथ केवल सौदे की बात करना। ये कांग्रेस ने अपनी नीति चलाई। राउंड टेबल के पश्चात् जो कम्युनल एवार्ड आया वह स्पष्ट रूप से देश को तोड़ेने वाला था। कम्युलन एवार्ड में ही पाकिस्तान का बीजारोपण है। लोगों ने कहा कि इसका विरोध करें। गांधी जी ने और कांग्रेस ने कहा कि विरोध ा करेंगे तो मुसलमान नाराज हो जायेंगे। किंतु स्वीकार भी नहीं कर सकते। क्योंकि इतना स्पष्ट था कि यह देश विरोधी है। स्वीकार भी नहीं और विरोध भी नहीं इसके कारण ऐसी विचित्र भूमिका ली। बहुत लोगों को यह भूमिका मालूम नहीं कि कम्युनल एवार्ड के बारे में उसके बाद आने वाले चुनाव के समय कांग्रेस की भूमिका थी। We neither accept nor reject Commnual Award हम कम्युनल एवार्ड को स्वीकार भी नहीं करते, अस्वीकार भी नहीं करते। लोगों ने कहा ये कैसे हो सकता है? चोर मकान में आता है। हम कहते हैं कि चोर के बारे में भूमिका

क्या है? आप कहते हैं हम उसका स्वागत भी नहीं करते, वह बाहर जाय ऐसा भी नहीं कहते । ये कोई नीति हो सकती है। Either accept or reject (स्वीकार करो या विरोध करो) एंक्सेप्ट करना संभव नहीं था क्योंकि स्पष्ट रूप से वह राष्ट्र विरोधी था और रिजेक्ट करने की हिम्मत नहीं थी। क्योंकि मुस्लिम वोट्स थे। इस भूमिका में चुनाव होने थे।

चुनाव होने के बाद एक घटना हुई। छोटी सी घटना। जो इतिहास बारीकी से पढ़ेंगे उनको ये बात ध्यान में आयेगी। जिसके कारण पं. जवाहर लाल नेहरू जैसे व्यक्ति को भी सत्य का साक्षात्कार कुछ समय में हुआ। क्या हुआ था। कम्युलन एवार्ड के चुनाव के समय मुस्लिम लीग को बहुत कम वोट मिला। कम जगह उनको सत्ता मिली। कांग्रेस ज्यादा आ गयी। ऐसे समय में यू.पी.में घटना ऐसी हुई कि यू. पी. के कांग्रेस नेताओं ने मुस्लिम लीग जो यू.पी.में जो थी उनके साथ समझौता किया था कि भई आपका और हमारा यूनाइटेड फ्रंट नहीं हो सकता। आप भी खड़े कीजिए हम भी खड़ें करेंगे। किंतु एक काम करें कि जो हमारे महत्व की सीट है जहां हमारे अच्छे नेता खड़ें हैं वहां मुस्लिम लीग का कमजोर कैन्डिडेट खड़ा कीजिए ताकि हमारा नेता चुनकर आ जाये।

तो उन्होंने वो माना और उनके अच्छे– अच्छे लोग चुनकर आ गये। कांग्रेस के चुनकर आने के बाद फिर यहीं से कांग्रसी नेता मुकर गये। उन्होंने कहा था कि ऐसा यदि आप करेंगे तो हम आपके एक दो लोग मंत्रिमंडल में लेंगे कैबिनेट में लेंगे। लेकिन जब कांग्रेस की स्पष्ट मेजोरिटी आ गयी तो वे मुकर गये और उन्होंने वो मानने से इंकार कर दिया। फिर मुस्लिम लीग ने घोषणा की कि हमारे साथ जो सीक्रेट एग्रीमेन्ट था अब ये मुकर रहे हैं , ये विश्वासघात किये है। और फिर जिन्ना वगैरह लोगो ने इतना जोरदार प्रचार किया कि अगले इलेक्शन में कई प्रदेशों में मुस्लिम लीग की मैजोरिटी आ गयी।

साक्षात्कार

कभी न कभी साक्षात्कार हो जाता है। उस समय जवाहर लाल जी को साक्षात्कार हुआ था। नवम्बर १६३७ में उनका एक बहुत महत्वपूर्ण स्टेटमेंट आया था। कांग्रेस सेशन में भी उनकी चर्चा हुई । देश भर में भी उसकी चर्चा हुई। उनका स्टेटमेंट यह था कि मुसलमानों के बारे में कांग्रेस ने अभी तक जो नीति अपनायी, वह गलत थी। हम लोगों ने जो मुसलमानों को हिंदुओं से अलग रखने में ही अपना राजनीतिक स्वार्थ मानते हैं ऐसे लोगो को मुसलमानों का प्रतिनिधि समझकर उनके साथ सौदेबाजी की। जवाहरलाल जी ने उस स्टेटमेंट में कहा कि सौदेबाजी में ऐसा

कुछ निकल ही नहीं सकता क्योंकि वे अपना राजनीतिक स्वार्थ देखेंगे जो मुसलमानों को हिंदुओं से अलग रखने में है। तो हमारा जो अब तक का एप्रोच था वो गलत था। अब हमें सही एप्रोच लेना चाहिए और उस समय जो जवाहर लाल ने कहा वह सही एप्रोच था। उन्होंने कहा कि ये जो ठेकेदार हैं ये निहित स्वार्थ वाले ठेकेदार है इनको इग्नोर कीजिए। इनकी फिकर न कीजिए। जनता में वह यह संदेश दे रहे थे कि कांग्रेस एज ए नेशनलीस्ट पार्टी शुड हैव मुस्लिम मास कांन्टेक्ट। ये उनके शब्द थे। जिनके बाल मेरे जैसे पके होंगे उनको ये याद होगा। और वो सही रास्ता था सौदेबाजी नहीं। उनको समझाना कि राष्ट्रवाद क्या है? और जवाहरलाल जी ने आशा प्रकट की थी कि वो समझ जायेंगे कि हम डायरेक्टली मुसलमान आदमी के पास पहुंचेंगे तो नेताओं को नहीं समझा सकते क्योंकि वो सौदेबाजी करेंगे।

लेकिन दुख की बात यह कि १६३७ में ये कहा गया और थोड़ा मुस्लिम मास कान्टैक्ट का प्रोगाम कांग्रेस ने शुरू भी किया। इस बीच दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ। फिर महायुद्ध के कारण एकदम कई गड़बड़ियां शुरू हो गई और मुस्लिम कांटेक्ट प्रोग्राम के लिए समय ही नहीं मिला। बाद की सारी घटनाएं आपके ख्याल में हैं। वो जो जवाहरलाल जी को साक्षात्कार हुआ उसका सर्वपंथ समादर मंच के साथ कन्टीनुऐशन है ऐसा आप कह सकते हैं। इसीलिए नेताओं के साथ ठेकेदारों के साथ बातचीत मत करो। अपनी भूमिका क्या हैं? यह सामान्य मुस्लिम आदमी को समझाओ। वह समझ सकता है। क्योंकि जैसा जस्टिस मुर्तजा हुसैन ने कहा कि वास्तव में झगड़े नहीं है। ये नेता लोग झगड़े लगा रहे हैं। यही भूमिका लेकर हम लोग काम कर रहे हैं।

समररसता आवश्यक

मतभेद परिवार में होते हैं, मनभेद नहीं होने चाहिए। यदि अलग–अलग रिलिजंस होंगे तो एकता होगी ही ऐसी गारंटी नहीं हो सकती। क्योकि हिंदू नाम का रिलिजन नहीं है और सौभाग्य की बात है कि दो साल पहले सुप्रीम कोर्ट में निर्णय आया कि हिंदू इज नॉट ए रिलिजन, हिन्दू इज ऐ वे ऑफ लाइफ। उसके बाद ये एक सवा साल पहले दूसरा सुप्रीम कोर्ट का जजमेंट आया है कि धर्म अलग है । रिलिजन अलग है। वैसे सुप्रीम कोर्ट ने कहा नहीं होता तो सत्य कुछ अलग होता ऐसा नहीं है। लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने भी ये दो बातें इन्डोर्स की कि हिन्दू इज नॉट ए रिलिजन, हिंदू इज वे ऑ लाइफ। धर्म अलग बात है रिलिजन अलग बात है और इसीलिए हमने कहा कि हम प्रार्थना करते हैं कि युनिटी की बात मत

करो। यदि दो अलग यूनिट होंगे तो यूनिटी हो सकती है । हम दो यूनिट नहीं मानते। हम वननेस में विश्वास करते है। समरसता मानते हैं। उसी प्रकार ज्यादा देर त्तक सहिष्णुता नहीं चल सकती। यदि सहिष्णुता रखने से लाभ होगा तो सहिष्णुता रखूंगा। लाभ नहीं होगा तो सहिष्णुता क्यों रखुगा। थोड़ा आपके प्रभाव से आपको बाबा बेटा कहकर थोड़ा समय मांग लूंगा। ज्यादा नहीं मांगा जा सकता।

तो यूनिटी की बात नहीं। हिंदू –मुस्लिम यूनिटी का मतलब है कि हिंदू अलग युनिट, मुस्लिम अलग युनिट, गलत बात है। सम्पूर्ण समाज एक है। और इसलिये समभाव नहीं, समादर। इस भूमिका को लेकर हम लोग काम कर रहे हैं। इसी भूमिका को लेकर मैं समझता हूं कि गणेश शंकर विद्यार्थी का प्राणार्पण हुआ। भाषणों से नही, लेखों से नहीं, मुस्लिम लोगों के इकट्ठा वोट बैंक प्राप्त करने के लिये, बेईमानी के साथ उनका प्राणार्पण नहीं हुआ। गैर जिम्मेवार राजनेताओं ने जो सांप्रदायिकता विरोधी प्रचार सेकुलरिज्म के नाम से किया है उनको न सेकुलरिज्म से मतलब है न साम्प्रदायिकता से मतलब है। उनका मतलब प्राइम मिनिस्टर की गद्दी के साथ है ऐसे बेईमान नेताओं के भाषणों की तरफ ध्यान न देते हुए हम सभी को समझें। और ये समझाने का काम केवल हिंदुओं और मुस्लिम के बस में नहीं है। हिंदुओं में भी कितने झगड़े हैं मुसलमानों में भी कितने झगड़े हैं।

इसलिए हमने सामाजिक समरसता मंच की भी स्थापना की थी। १९८३ में इत्तिफाक से ऐसा हुआ कि डॉ. अम्बेडकर जी का अंग्रेजी कैलेण्डर के मुताबिक ज़न्मदिन १४ अप्रैल और डॉ. हेडगेवार जी का हिंदू कैलेडर के मुताबिक ज़न्मदिन वर्ष प्रतिपदा दोनो एक ही दिन आये। तो उस दिन हम लोगों ने समाजिक समरसता मंच की स्थापना की थी। केवल हिंदुओं में एकता निर्माण करने के लिए या 'वननेस' का साक्षात्कार हिंदुओं को देने के लिए। तो दोनों आंदोलन सामाजिक समरसता मंच और सर्वपंथ समादर मंच दोनों की स्थापना की है। पूर्व वक्ता ने एक बात ठीक कही कि एज्युकेशन की आवयकता है। प्रोपेगेंडा नहीं। प्रोपेगेंडा अलग बात है, एजुकेशन अलग बात है। प्रोपेगंडा का मतलब इतना ही है कि मेरी पार्टी अच्छी है बाकी सब खराब प्राचार, याने आत्मस्तुति पर निंदा। एज्युकेशन का मतलब है वास्तव में चारों ओर क्या–क्या कष्ट हैं ये लोगों को समझाना। और आज भी जो हिंदुस्थान में सारे झगड़ें चल रहे हैं इसका एक कारण समझ लीजिए वह कारण बताकर मैं मेरा भाषण पूरा करूंगा।

ब्रिटेन और भारत

हम भारत में ब्रिटिश पार्लियामेंटरी सिस्टिम लाये। ये सिस्टिम हमारे देश के अनुकूल नहीं है। १६०८ में "हिंद स्वराज्य" नाम की पुस्तिका में महात्मा जी ने लिखा था कि ब्रिटिश पार्लियामेंटरी सिस्टिम भारत के योग्य नहीं है। ये सिस्टम आ जायेगी तो वोटर्स की अवस्था वैश्या के समान हो जायेगी। Which can be purchased and sold । महात्मा गांधी जी ने १६०८ में कहा था ब्रिटिश पार्लियामेंटरी सिस्टिम यहां सूट नहीं होगी। यह पद्धति संयुक्तिक नहीं। यहां गवर्नमेंट ऑफ इन्टरेस्ट काम करेगा। इसका मुझे विश्लेषण देने की आवश्यकता नहीं है। गवर्नमेंट आफ इन्टरेस्ट का मतलब होता है फंक्शनल रिप्रेजेंटेशन "Functional Representation काम करेगा। १६२६ में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी जेल में थे वहां उन्होंने आटो बायोग्राफी लिखी। उन्होंने कहा यदि हम ब्रिटिश पार्लियामेंट की सिस्टिम अपनाते हैं तो सर्वप्रथम चुनाव के समय भ्रष्टाचार व्याप्त होगा। १६२६ में चक्रवर्ती राजगोपालचारी ने कहा था। आज हमारे नेता भ्रष्टाचार विरोधी भाषण कर रहे हैं। लेकिन स्वराज्य प्राप्ति के ६ साल पहले दुनिया के एक श्रेष्ठ विचारक मानवेन्द्र नाथ राय ने एक किताब लिखी पार्टी पावर एंड पौलिटिक्स। उन्होंने दुनिया के बहुत सारे कांस्टीयून्स का अध्ययन किया था। उन्होंने स्पष्ट कहा कि हम यदि ब्रिटिश पार्लियामेंटरी सिस्टिम लाते हैं तो हिंदुस्तान में या किसी भी देश में यह सिस्टम तब तक यशस्वी नहीं हो सकता जब तक पब्लिक एज्युकेशन हंडरेड परसेंट नहीं है।

आज हमारे नेता हमको क्या बता रहे हैं कि ये सिस्टम यदि इंगलैंड में काम करती है तो हमारे यहां क्यों नहीं काम कर सकती। वास्तव में विन्स्टन चर्चिल ने कहा कि यह सिस्टिम सबसे अच्छी है इसलिए नहीं, कम से कम खराब है इसलिये यह स्वीकार की है। वे भी दोष को जानते हैं। खैर अब इंग्लैंड में काम करती है इसलिए हमारे यहां क्यों नहीं करती ऐसा ये कह रहे हैं। एम.एन. राय ने कहा कि इग्लैंड में पब्लिक एज्युकेशन बहुत है। वहां मैनेजर होता है वह भी पढ़ता है नागरिक पढ़ता है वोटर पढ़ता है। यहां यदि लोग निरक्षर और अशिक्षित है आप बहुत अच्छा प्रोग्राम देंगे। कौन पढ़ेगा? उसके बाद देहरादून में उनका एक शिविर हुआ। एम.एन. राय की विशेषता यह थी कि उनका मास फोरम नहीं था लेकिन वे स्वयं इंटेलेक्चुअल जायंट (महापंडित) थे एवं उनके सारे शिष्य इंटेलेक्चुअल जायंट थे। जैसे जस्टिस चंद्रचूड़, लक्ष्मण राजश्री जोशी। उन शिष्यों ने एक प्रश्न किया कि करोड़ों लोग निरक्षर है। पब्लिक एज्युकेशन करने में तो बहुत समय

लगेगा यह तो बड़ा लंबा मार्ग है। एम.एन्. राय का उत्तर बहुत अच्छा रहा उन्होंने कहा Yes it may be a long way] but if would be the only way-then it is also the shortest way ये लंबा रास्ता हो सकता है लेकिन यदि यह एकमात्र रास्ता हम जानते हैं तो सबसे नजदीक का रास्ता वही हो सकता है।

आज हम उसका अनुभव कर रहे हैं। सिस्टिम नयी है। हम जानते हैं कि आज के कॉस्टीट्यूशन में १६३५ एक्ट ७० प्रतिशत है। बॉकी अंग्रेजों का थोड़ा सा बाहर के लोगों का अनुकरण करते हुए हमारा कांस्टीट्यूशन है। वहां ये पार्लियामेंटरी सिस्टिम है यही सिस्टिम हम यहां लाये। लेकिन फिर भी दोनों में अंतर है। दोनों देशों का ऐतिहासिक घटनाक्रम इतना अलग है जिसके कारण हिंदुस्तान में ये गड़बड़ चल रही है। हिंदू– मुसलमान है, फारवार्ड बैंकवर्ड है, बैकवर्ड अपर क्लासेस है ,सवर्ण विरूद्ध अस्पृश्य, ये सारी गड़बड़ी है।

आप ऐसा मत समझिये कि सारे दलित एक हैं। हमारे यहां ऐसी जातियां हैं कि एक दलित जाति के लोग दूसरे दलित जाति के हाथों से पानी नहीं पीते। कुछ गांव ऐसे है जहां दलित ही अलग--अलग जाति के हैं। वहां एक दलित जाति का कुआं अलग है, दूसरे दलित जाति का कुआँ अलग है। पानी नहीं पी सकते। सब जगह झगड़े हैं।

समाज प्रबोधन

किंतु पब्लिक एज्युकेशन न होते हुए डेमोक्रेसी आने से क्या हुआ? वहां कैसे आई? हमारे यहां कैसे आई? थोड़ा देखो। आज वहाँ डेमोक्रेसी है ऐसा कहते हैं। क्योंकि वहां एडल्ट फ्रेंचाइज (वयस्क मताधिकार) है। हमारे देश में भी वयस्क मताधिकार है। एडल्ट फ्रेंचाइज माने हरेक वयस्क को वोट का राइट है। इंगलैंड में भी है, वहां कैसे आया? वहां पहले केवल राजशाही थी मोनार्की। उसके खिलाफ डेमोक्रेसी का झगड़ा कब शुरू हुआ? आपको आश्चर्य होगा। बारहवें शताब्दी के अंतिम दशक में शुरू हुआ। रिचड़ली ३ रिचड्ली १ इनके समय ही ये शुरू हुआ। लेकिन ज्यादातर १२१५ का जो मैग्नाचार्ट है वह सब लोग जानते हैं। १२१५ में पहली स्टेप आयी। पार्लियामेट के जो अधिकार आज हैं वे नहीं थे। केवल एडवाइजरी बॉडी जैसे कि किंग्स काउंसिल एडवाइजरी बॉडी है वैसे ये भी एडवाइजरी बॉडी (सलाहकार मंडली) थी। इस प्रकार तेरहवीं शताब्दी के अंत में पार्लियामेंट शब्द का निर्माण हुआ । लेकिन पार्लियामेंट को अधिकार नहीं थे। ये कब आई? १६८८ के जिसको लोग ग्लोरियस रिवोल्यूशन कहते हैं उसके पश्चात यह मान्य हुआ । मोनार्क सुप्रीम नहीं पार्लियामेंट सुप्रीम है। राजा श्रेष्ठ नहीं

अपितु पार्लियामेंट सर्वश्रेष्ठ है। पार्लियामेंट के शब्द मोनार्क राजा को सुनने चाहिए यह विचार १६८८ में पहली बार आया। अर्थात १२१५ में मैगनाचार्टा तेरहवीं शताब्दी के प्रारंभ में और १७ वीं शताब्दी के अंत में पार्लियामेंट की सुप्रीमैसी आयी। क्योंकि सबको अधिकार नहीं था। किन्तु १६८८ में भी कितने लोगों को पार्लियामेंट में मत देने का अधिकार था? केवल चार परसेंट लोगों को। कुल जनसंख्या के चार प्रतिशत मात्र लोगों को मतदान का अधिकार था। फिर उन्होंने कहा कि १८३२ में हमने जो एक्ट बनाया– इट वाज ए लॉग लीप टूवर्ड्स डेमोक्रेसी ऐसा कहा। किंतु उस एक्ट के द्वारा कितने लोगों को मतदान का अधिकार मिला? केवल १० प्रतिशत लोगों को। कुल जनसंख्या के केवल १० प्रतिशत लोग केवल मतदान के अधिकारी थे १८३२ में। फिर उसके बाद १८६७,१८८२ मतदाताओं का क्षेत्र बढ़ाया गया। १९१८ में ज्यादा से ज्यादा लोगों को मतदान का अधिकार मिला। सभी को मिला। और आपको आश्चर्य होगा कि हमारे यहां अभी बात चली है कि महिलाओं को ३३ प्रतिशत रिजर्वेशन होना चाहिए। परंतु इसके पूर्व पुरुषों को Quali fied शैक्षणिक योग्यता चाहिए तो महिलाओं के लिये भी इसकी आवश्यकता है। उन्हें मतदान का अधिकार नहीं मिले ऐसा हमारा कहना नहीं है, परन्तु पंहले उन्हें शैक्षणिक योग्यता प्रदान करने की व्यवस्था करो। लेकिन इंग्लैंड में १२१५ से प्रारंभ होकर १९६५ में For the First Time प्रथम बार वहां की महिलाओं को मतदान का अधिकार मिला। और वो भी पूरा अधिकार नहीं मिला। उन्होंने अधिकार तो दिया लेकिन पुरूषों को अधिकार १८ साल के बाद था महिलाओं को २१ साल के बाद मिला। पार्लियामेंट में प्रश्न आया । आपने दोनों में फर्क क्यों रखा। क्यों? उन्होंने कहा– यह एक एक्सपेरीमेंट है। एक्सपेरिमेंट कहां तक सफल होता है देखेंगे। सफल हुआ तो सब महिलाओं को अधिकार देंगे नहीं तो यही तक सीमित रखेंगे। सभी महिलाओं को और सभी पुरूषों को मतदान का अधिकार १९२८ में मिला। याने यह जो संघर्ष चला यह १२१५ से १९२८ तक चला। कितनी शताब्दियां हो गई १३वीं शताब्दी से लेकर २०वीं शताब्दी तक ये संघर्ष चला। अर्थात् सात शताब्दी तक संषर्ष चला। सघर्ष में लोगों को एज्युकेशनल मिलता है। पोलिटीकल एज्युकेशल होता है। संघर्ष में लोगो का माइन्ड मोल्ड होता है। मन की जड़ें ह ानी होती हैं। मन का सांचा (Mental matrix) तैयार होता है। इसके कारण वहां डेमोक्रेटिक टेम्परामेंट पहले आया, डेमोक्रेटिक इंस्टीट्यूशनंस बाद में आयी। अब ये ७०० साल का संघर्ष है। उसमें मासेस का पोलिटीकल एजूकेशन हुआ उसके कारण मासेस का डेमोक्रेटिक टेम्परामेट पहले तैयार हुआ। सर्वप्रथम पूरे समाज की जनतंत्र की मानसिकता तैयार होना और बाद में जनतंत्र के आधिकर प्राप्त

होना ऐसा इग्लैंड का ऐतिहासिक घटनाक्रम बतलाता है।

भारत का घटनाक्रम

हमारे देश में क्या हुआ? सर्वप्रथम पश्चिमी पार्लियामेंटरी डेमोक्रेसी १६२० में आयी। मों टेग्यू चेम्सफोर्ड के रिफोर्म्स के फलस्वरूप। उस समय हिंदुस्थान की जनसंख्या २४ करोड़ थी। २४ करोड़ में से कितने लोगों को मतदान का अधिकार १६२० में था? उस समय फ्युडल राज्य पद्धति थी। काउंसिल ऑफ स्टेट्स के लिये १७००० मतदाताओं को मतदानका अधिकार था। और नेशलन एसेंबली के लिये ६ लाख नौ हजार लोगों को अधिकार था। हालांकि १७००० में से बहुत सारे लोग ६ लाख नौ हजार में शामिल थे। फिर भी दोनों मिलकर कितनी संख्या होगी? देखिए। दस लाख से कम हो जाती है । तो दस लाख से कम लोगों को मतदान का अधिकार १६२० में था और वह भी Without any struggle for democracy । स्ट्रगल तो फ्रीडम के लिए चला था, पर डेमोक्रेसी के लिये स्ट्रगल नहीं था। जैसे कांस्टीट्यूशन तैयार हो गई, करोड़ों लोगों को एकदम मतदान का अधिकार मिला। इसके कारण साइकोलॉजी में क्या अंतर नहीं आएगा? इग्लैंड में लोगों ने सात शताब्दी तक स्ट्रगल चलाया जिसके कारण पौलिटिकल एजूकेशन हुआ, जिसके कारण मॉल्डिंग आफ माइंड्स हुआ, डेमोक्रेटिक टेम्प्राइमेंट हुआ। इन हिस्टोरिकल प्रोसेस और एकदम १६५० के बाद एकाएक करोड़ों लोगों को अधिकार मिल गया। यह ऐसा ही है जैसा कोई आदमी गरीबी से ऊपर आता है। धीरे–धीरे मेहनत करते करते बड़ा श्रीमान हो जाता है । वो एक एक पैसे की कीमत जानता है। लेकिन उसी का लड़का जो श्रीमंत अवस्था में पैदा होता है उसके लिए पैसे की क्या कीमत है? तो पैसे के बारे में जो दृष्टिकोण सेल्फमेड पिता का होता है और ऐसे लड़के का होता है इसमें जैसा अंतर है वैसा ही अंतर इंगलैंड की पद्धति और भारत की पद्धति में है। इग्लैण्ड और यहां एकदम समान है ऐसा बोलने से कुछ भी हासिल नहीं होगा। वहां सात शताब्दी के बाद ये टैम्परामेंट पैदा हुआ यहां ये टेम्परामेंट नहीं है और जब तक राजनैतिक प्रशिक्षण और जनतान्त्रिक मानसिकता नहीं है तब तक ये सारे जो है लालू यादव जैसे पैदा होंगे ही इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। तो यह समझना कि हम ऐसी कोई पद्धति बनायेंगे जिसमें से लालू यादव निर्माण होना ही बंद हो असंभव है। रास्ता एक ही है– पब्लिक एजुकेशन। यह रास्ता सबसे लंबा है लेकिन यही एकमात्र रास्ता होने के कारण नजदीक का रास्ता है। इसी का एक रास्ता सर्वपंथ समादर मंच है।

धर्म एक ही है सृष्टि का धर्म। जैसे गुरूत्वाकर्षण (ग्रैविटेशन) धर्म है। किंतु पश्चिम में उसका सर्वप्रथम साक्षात्कार न्यूटन को हुआ। इसलिए उसको न्यूटन्स लॉ कहते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि न्यूटन के पहले यह नहीं था। वह सनातन है, चिरंतन है। लां ऑफ ग्रैविटेशन– गुरुत्वाकर्षण के प्राकृतिक नियम का साक्षात्कारी पुरुष पश्चिम में भले ही न्यूटन था परंतु हमारे यहां पहले ही इसका साक्षात्कार हो चुका था। जैसे लां ऑफ रिलेटिविटी सनातन है चिरंतन है। पश्चिम में आइन्स्टीन ने पहले पहल उसका साक्षात्कार किया इसलिए लॉ आफ रिलेटिविटी को आइन्सटीन्स लॉ कहते हैं। किंतु यह आइन्स्टीज का बनाया हुआ नहीं है, उन्होंने केवल देखा। वैसे ही पहले पहल धर्म देखने वाले हिंदू थे इसलिए उसे हिंदू धर्म कहा गया। वो धर्म है हिदू– धर्म नहीं है। पहले देखने वाले हिंदू थे, यह ऐतिहासिक घटना है।

वन्दे मातरम्
वन्दे मातरम्
अर्चना प्रकाशन